ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/9510 डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal

प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 24, अंक 215 सितम्बर 2021

'' हिंदी भाषा अनेकता में एकता को स्थापित करने की सूत्रधार है। ''

सभी देशवासियों को हिंदी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं

संपादक – डॉ. तारा परमार

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

आश्वस्त

वर्ष : 24 अंक 215
सितम्बर 2021

आश्वस्त

(सन् 1983 से निरंतर प्रकाशित)

RNI No.: MPHIN/2002/9510
ISSN : 2456-8856

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन (पंजीयन क्रमांक 2327 दिनांक 13/05/1999) की मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक
सेवाराम खाण्डेगर
11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श
आयु. सूरज डामोर IAS
पूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक
डॉ. तारा परमार
9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :
डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली
डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात
डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात
डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.

कानूनी सलाहकार
श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	अपनी बात	डॉ. तारा परमार	03
2.	महिला जनप्रतिनिधियों की भूमिका व चुनौतियाँ (जैसलमेर जिले के विशेष संदर्भ में)	रेणुका चौधरी शोधार्थी	04
3.	बैगा जनजाति : ऐतिहासिक दृष्टिकोण से वर्तमान सामाजिक स्थिति का अवलोकन	डॉ. अमनदीप कौर	06
4.	राष्ट्रीय रक्षा नीति पर डॉ. अम्बेडकर के विचार	डॉ. प्रियंका मिश्रा डॉ. वरुण गुलाटी	11
5.	हिन्दी कहानी में वृद्ध जीवन	डॉ. अनिता गोयल	15
6.	मोहनदास नैमिशराय की कहानियाँ : दलित चेतना के संदर्भ में	विप्रा जनार्दन राऊल शोधार्थी	20
7.	" The Poetics of Dholi Folk Poetry During the Corona"	Shankarlal Dholi	23

UGC Care Listed Journal

खाते का नाम – आश्वस्त (Ashwast)
खाते का नं.– 63040357829
बैंक – भारतीय स्टेट बैंक,
शाखा– फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)
IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.com
E-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

एक प्रति का मूल्य	:	रुपये 15/-
वार्षिक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 150/-
आजीवन सदस्यता शुल्क	:	रुपये 1,500/-
संरक्षक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 10,000/-

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेगा।

अपनी बात

हिन्दी भारत की जीवन्त, समृद्ध, सरल–सहज, लालित्यपूर्ण और वैज्ञानिक सम्मत भाषा है। स्वतंत्रता संग्राम में भी पूरे देश को एक सूत्र में बाँधने के लिए हिन्दी ही महत्वपूर्ण कड़ी रही है। हिन्दी जिस ढंग से लिखी जाती है, ठीक उसी तरह पढ़ी जाती है और ठीक उसी तरह समझी भी जाती है ।

15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत संविधान–निर्मात्री सभा ने भारतीय गणतंत्र का संविधान बनाते समय तीन आवश्यकताओं का अनुभव किया–झण्डा, राष्ट्रगान और राष्ट्रभाषा। संविधान निर्माता इस बात पर एक मत थे कि स्वतंत्र देश का संविधान अधूरा रहेगा, यदि राष्ट्रीय अस्मिता के इन प्रतीकों को इसमें सम्मानजनक स्थान नहीं दिया जायेगा। झण्डा और राष्ट्रगान तय हुआ।

14 सितम्बर 1949 को संविधान सभा द्वारा देवनागरी लिपि में लिखी जानेवाली हिन्दी भारतीय संघ की राजभाषा घोषित की गयी और जनसंख्या के आधार पर विभिन्न प्रांतों में 14 प्रादेशिक भाषाऐं स्थापित की गयी। (जिनकी संख्या अब 22 हैं।) उस समय 15वीं भाषा के रूप में अंग्रेजी को रखने का प्रस्ताव आया, जिसे संविधान सभा ने अस्वीकार कर दिया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान तो दिया गया, परंतु 15 वर्षों तक अंग्रेजी को राजभाषा के रूप में चलते रहने देने की व्यवस्था की गई। पुनः 26 जनवरी 1965 के बाद यह प्रस्ताव पारित किया गया कि–''हिन्दी सभी राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होगी, परंतु इसके साथ–साथ अंग्रेजी भी सह राजभाषा के रूप में प्रयुक्त होती रहेगी।'' परिणामस्वरूप पूर्ण स्वतंत्रता काल की राष्ट्रभाषा हिन्दी, स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत वस्तुतः राजभाषा बनकर रह गई।

हिन्दी हमारी अस्मिता, सांस्कृतिक चेतना और हमारी गौरवमयी विरासत की संरक्षिका है। यह हमारी राष्ट्रभाषा एकता, धार्मिक सहिष्णुता, राष्ट्रीय मन की अभिव्यक्ति और मेल–मिलाप की भाषा है। देवनागरी लिपि में समस्त भारतीय भाषाओं को आत्मसात किया जा सकता है। उर्दू इसकी छोटी बहन है। अंग्रेजी, फ्रेंच तथा अन्यान्य भाषाओं के शब्द भण्डार को सहजभाव से ग्रहण कर लेने की इसमें प्रवृत्ति और प्रकृति है। इसमें वैज्ञानिक, इंजीनियरी, प्रोद्योगिकीय, नाभिकीय, भौतिकीय आदि सभी संकल्पनाओं को अभिव्यक्त करने की अपूर्व क्षमता है। हिन्दी के पास और वह सब कुछ है, जिसके कारण कोई भाषा स्व राष्ट्रभाषा, पर राष्ट्रभाषा, अन्तर्राष्ट्रीय भाषा और विश्व भाषा बनती है।

हिन्दी की स्वीकृति की समस्या दो मुखी है, संसार में दूसरी सबसे अधिक बोली जानेवाली भाषा होने के बाद भी अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में उसकी स्थिति नगण्य–सी है, वह संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा उसके व्यवहार में लाई जानेवाली स्वीकृत भाषाओं में नहीं है, यह बात अलग है कि पूर्व प्रधानमंत्री माननीय अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा प्रतीकात्मक रूप से दो–एक बार वहाँ इसका प्रयोग किया गया। कोई भाषा कब और कैसे उचित स्थान और सम्मान प्राप्त करती है, इसका निर्णय दो बातों से होता है–एक वह भाषा कितनी बड़ी मात्रा में लोगों को व्यवसाय दे सकती है और रोटी–रोजी कमाने में उसकी कितनी सहायता करती है, दूसरी बात उस भाषा का ज्ञान उनके अहं की कितनी संतुष्टि करती है। प्रत्येक समाज में एक संभ्रांत वर्ग होता है जो अपनी शिक्षा, पद, धन अथवा कुछ अन्य कारणों से स्वयं को विशिष्ट समझता है और अपनी हर बात, हर गतिविधि और तेवर में विशिष्टता प्रदर्शित करने में गौरव और मान–सम्मान का अनुभव करता है।

अंग्रेजी देश में विशिष्टता और संभ्रांतता की प्रतीक है, हिन्दी आम बोलचाल की भाषा है। अंग्रेजी को हीनता का भाव केवल हिन्दी में ही नहीं है, बड़ी मात्रा में यह भाव सभी भारतीय भाषाओं में है। विशिष्टता का एहसास आते ही हमारी भाषाएं पीछे हट जाती है और अत्यंत विनम्रता के साथ अंग्रेजी को सादर कुर्सी पर आसीन करा देती है।

सभी भारतीय भाषाओं को अपनी विशिष्टता की अनुभूति हो, उनमें रचित साहित्य संसार में समादृत हो और अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर केन्द्र की राजभाषा को उचित स्थान प्राप्त हो, यदि यह चिंता केवल हिन्दी की नहीं सभी भारतीय भाषाओं की बन जाए तो सारी बात बहुत आसान हो जाती है। इसलिये यह लड़ाई केवल हिन्दी की नहीं सभी भारतीय भाषाओं की है और इन्हें मिलकर यह लड़ाई लड़नी होगी।

– डॉ. तारा परमार

महिला जनप्रतिनिधियों की भूमिका व चुनौतियाँ

(जैसलमेर जिले के विशेष संदर्भ में)

– रेणुका चौधरी

शोध सारांश : महिलाओं की स्वतंत्रता, समानता, शिक्षा, स्वास्थ्य व उनकी सुरक्षा का स्तर किसी भी राष्ट्र के सर्वांगीण विकास की प्रथम आवश्यकता है। भारत का संविधान महिलाओं को समानता का अधिकार प्रदान कर उन्हें सशक्त बनाता हैं। केवल कागजों में ही नहीं वास्तव में महिलाओं की क्या स्थिति है? ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में महिला जनप्रतिनिधियों की भूमिका से गांव में शासन कार्यों में महिलाओं से सम्बन्धित जो समस्याएँ हैं उनका निवारण वे बखूबी कर सकती है। कहावत है **"एक बेटी पढ़ेगी, तो सात पीढ़ी तरेगी"।** महिलाओं का प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ना आवश्यक है।

मूल शब्द : महिला जनप्रतिनिधि, समानता का अधिकार, आरक्षण, चुनौतियाँ, पुरुष प्रधान, प्रथा।

"किसी देश की प्रगति का पैमाना यह हो सकता है कि उस देश में महिलाओं की स्थिति क्या है?" **– मार्गट कजिन्स**

राजस्थान प्रारम्भ से ही विषम परिस्थितियों की भूमि रहा है। यहाँ के विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक तत्वों ने एक ओर महिलाओं की भूमिका को बढ़ाया है वहीं दूसरी ओर ग्रामीण समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों व रूढ़ियों के कारण महिलाएँ अभी भी पिछड़ी हुई है। राजस्थान में कई वर्षों से चली आ रही घूंघट प्रथा, पुरुषों से बात नहीं करना आदि महिलाओं के पिछड़ेपन का मुख्य कारण है। प्रस्तुत शोध में राजस्थान के जैसलमेर जिले की ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में महिला जनप्रतिनिधियों की भूमिका व उनके कार्यक्षेत्र में आने वाली चुनौतियों का वर्तमान परिदृश्य प्रस्तुत किया गया है। इसी क्रम में पंचायत में महिलाओं की स्वयं की जुबानी का भी उल्लेख किया गया है।

ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में 73वें संविधान संशोधन में महिलाओं को प्राप्त आरक्षण उनकी राजनीति में भागीदारी के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। राजस्थान में पंचायती राज अधिनियम 1994, 23 अप्रैल 1994 को लागू किया गया था। इस अधिनियम में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था की गई थी,[1] लेकिन 2009 से 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था कर दी गई।

संविधान के 73वें संशोधन के बाद पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को मिले आरक्षण के बाद से राजस्थान में महिला जन प्रतिनिधियों का यह पाँचवा कार्यकाल है। साक्षरता की दृष्टि से राजस्थान का देश में 26वां स्थान है। 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान की कुल साक्षरता दर 66.1 प्रतिशत है वहीं महिलाओं की कुल साक्षरता दर 52.1 प्रतिशत है। जैसलमेर जिले की कुल साक्षरता दर 57.2 प्रतिशत है व महिला साक्षरता दर 39.7 प्रतिशत है।[2] साक्षरता दर न्यून होने के कारण यहाँ की महिलाएँ इतनी पिछड़ी हुई है, लेकिन ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी एक नया मोड़ ले रही है।

जैसलमेर जिले में 7 पंचायत समितियाँ (जैसलमेर, मोहनगढ़, सम, फतेहगढ़, भणियाणा, सांकड़ा, नाचना) व 206 ग्राम पंचायतें हैं। 2020 के चुनाव परिणाम में 3 महिला प्रधान (भणियाणा, जैसलमेर, मोहनगढ़) व 107 महिला सरपंच चुनी गई। इस क्षेत्र में महिलाएँ एक नई मिशाल पेश कर रही है।

महिलाओं की राजनीति में बढ़ती भूमिका के

बावजूद राजस्थान के सन्दर्भ में अभी भी महिलाओं की स्वतंत्र भूमिका बड़ी कठिन है। ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में महिला जनप्रतिनिधियों को कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। महिला जनप्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली में आने वाली चुनौतियों को दूर करके ही महिला नेतृत्व को मजबूत किया जा सकता है।[3]

महिला प्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली में आने वाली चुनौतियाँ –

1. वित्तीय चुनौतियाँ –

महिला जनप्रतिनिधियों को वित्तीय चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि महिला जनप्रतिनिधि जब तक पंचायत के कार्यों के लिए वित्त की पूर्ण उपलब्धता नहीं करा पाती है, तब तक पंचायत का विकास संभव नहीं है। प्रशासनिक पारदर्शिता न होने पर सरकार द्वारा दिया गया वित्त पंचायत के कार्यों तक पहुँचते–पहुँचते आधा रह जाता है। सामाजिक बंधनों के कारण महिला जनप्रतिनिधि आवाज नहीं उठा पाती है।[4]

2. शैक्षणिक चुनौतियाँ –

ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षा का अभाव होने के कारण महिला जन प्रतिनिधियों में भी शिक्षा की कमी के कारण नेतृत्व कर पाना कठिन है। निरक्षरता के कारण अधिकतर महिलाओं की वास्तविक भूमिका उनके परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा निभायी जाती है।

3. सामाजिक चुनौतियाँ –

राजस्थान में प्रचलित घूंघट प्रथा के कारण महिला जनप्रतिनिधि केवल नाममात्र की प्रतिनिधि होती है। इसी प्रथा के चलते बड़े–बुजुर्गों का कहना है कि महिलाएँ घर का चूल्हा–चौका संभाले तो अच्छी लागे, उनको बाहर के कार्य करना शोभा नहीं देता। कई सामाजिक रूढ़िवादी परम्पराओं, जाति प्रथा, लिंग आधारित भेदभाव, पारिवारिक मामले आदि सामाजिक चुनौतियों के कारण महिला जनप्रतिनिधि वहीं की वहीं रह जाती है, आगे नहीं बढ़ पाती है।

4. राजनैतिक चुनौतियाँ –

राजनीति में महिलाओं की सहभागिता केवल आरक्षण के कारण है। आम लोगों में राजनीति की नकारात्मक छवि व इसमें व्याप्त भाई–भतीजावाद की वजह से भी महिलाएँ राजनीति में कम रूचि लेती है। महिलाओं को लेकर राजनैतिक दलों की उदासीनता भी है। इसका मुख्य कारण है कि पुरुष राजनीतिज्ञों को इस बात का भय रहता है कि महिलाओं के निर्वाचन से इनके दोबारा चुने जाने की संभावना कम या समाप्त हो सकती है इसलिए वे तैयार नहीं है।[5]

5. पुरुष प्रधान संस्कृति –

राजस्थान के स्थानीय स्वशासन में पुरुष प्रधान समाज अत्यंत हावी है क्योंकि वे महिलाओं का स्थान घर में समझते हैं, पंचायत में नहीं। राजस्थान में महिला जनप्रतिनिधियों के पति ही पंचायत का कार्य करते हैं उसके कारण उनके लिए सरपंच पति या प्रधान पति जैसे शब्द प्रयोग में लिये जाते हैं। महिला जनप्रतिनिधि केवल हस्ताक्षर करती है व उनकी उपस्थिति दर्ज करायी जाती है हालांकि अब इस स्थिति में थोड़ा सुधार होने लगा है व पूर्ण रूप से सुधार होने में अभी वक्त लगेगा।

राजस्थान के जैसलमेर जिले की नवगठित **'भणियाणा पंचायत'** समिति की 20 दिसम्बर 2020 को पहली महिला प्रधान दौली गोदारा चुनी गई। दौली गोदारा का कहना है कि प्रशासनिक कार्यों में कठिनाई आती है। पंचायत के कार्यों की पूर्ण रूप से जानकारी न होने पर समस्या आती है, वे उच्च अधिकारियों से बात नहीं कर पाती है, लेकिन वे जरूरत पड़ने पर परिवार के अन्य सदस्यों की मदद लेती है, ग्राम सभाओं में भाग लेती है व जनता की समस्याएँ सुनती है व निवारण भी करती है।

बीबाई वर्तमान में जैसलमेर जिले के गांव सीयाम्बर, **सम पंचायत** समिति की सरपंच है, उनके अनुसार अशिक्षा सभी समस्याओं की जड़ है, वे महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने पर जोर देती है, अशिक्षित महिला का कोई औचित्य नहीं है। उन्होंने कहा महिलाओं को बोला जाता है "थारो की काम है, हूँ कर लेई, थनै कई आतो–जातो तो नी है" कहने का अर्थ– तुम्हारा (महिलाओं) क्या काम है, तुम्हें कुछ आता तो है नहीं।

निष्कर्ष –वर्तमान समय में महिलाओं को आरक्षण प्राप्ति के बावजूद भी उनमें अभी सुधार की बहुत आवश्यकता है, महिलाएँ जब तक स्वयं आत्मनिर्भर नहीं बनेगी तब तक पुरुष प्रधान समाज का ही वर्चस्व रहेगा। महिला जनप्रतिनिधियों को प्रशिक्षण के माध्यम से मजबूत व आत्मनिर्भर बनाना होगा व परिवार के सहयोग से ही आगे बढ़ पायेगी। वर्तमान समय में महिलाओं की स्थिति में थोड़ा सुधार होने लगा है।

शोधार्थी, लोक प्रशासन विभाग,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर
चलभाष : 6350463206

संदर्भः–

1 शर्मा, कृष्ण दत्त व दाधीच, सुनीता, "राजस्थान पंचायत कानून", पंचायती राज जन चेतना संस्थान, जयपुर, 1997, पृष्ठ 7

2. www.jaisalmer.gov.in

3 देवपुरा प्रतापमल, ग्रामीण विकास का आधार आत्मनिर्भर पंचायतें, नई दिल्ली, 2006

4 मीना, सोनूलाल, पंचायती राज में महिला नेतृत्व, 2014, पृष्ठ 223

5 चौहान, भीमसिंह, राजस्थान के पंचायती राज में महिलाओं का योगदान , अरिहंत प्रकाशन, 2011

बैगा जनजाति : ऐतिहासिक दृष्टिकोण से वर्तमान सामाजिक स्थिति का अवलोकन

– डॉ. अमनदीप कौर

सारांश :– बैगा भारत का महत्वपूर्ण आदिवासी समुदाय है, जिसे मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ राज्यों में विशेष रूप से संरक्षित अनुसूचित जनजाति के रूप में मान्यता दी गई है। जो पारंपरिक घर, सामान्य बोली, विशिष्ट आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक एवं पारंपरिक संरचना के लिए पहचाना जाता है। बैगा समान मान्यताओं के एक आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था वाले स्वदेशी हैं इनका प्रथागत कानून पारंपरिक और मानक नियमों का निकाय है जो बैगा समुदाय की सामाजिक व्यवस्था एवं सांस्कृतिक निरंतरता को नियंत्रित करता है। वर्तमान समय में बैगा जनजाति आधुनिकता और परंपरा के अंर्तद्वन्द्व से गुजर रही है जिसकी वजह से हाल के वर्षों में बैगा जीवन शैली के विभिन्न पहलुओं में परिवर्तन के स्पष्ट लक्षण दिखाई दे रहे हैं जिसने परिवर्तन की गतिशीलता में विभिन्न पहलुओं के अंतर्संबंध में समग्र रूप से बैगा समुदाय का संस्कृतिक विघटन किया है। हालाँकि अब वे मुख्यधारा में अधिक गतिशील हो गए हैं और परिवर्तन एवं विकास के आधुनिक परिप्रेक्ष्य में

बाहरी दुनिया के साथ बातचीत कर रहे हैं। लेकिन प्रश्न वही है कि क्या आधुनिक होने की कीमत सांस्कृतिक पहचान मिटाकर चुकानी उचित होगी? प्रस्तुत शोध पत्र में छत्तीसगढ़ राज्य के कबीरधाम जिले के चिल्फी घाटी गाँव के पास बैगा जनजाति की ऐतिहासिक समृद्धि को रेखांकित करते हुए वर्तमान आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक तानेबाने की ज्वलंत समस्याओं का अवलोकन किया गया है, जिससे भविष्य में बैगा जनजाति को ऐतिहासिक दृष्टिकोण मिल सके।

संकेत शब्द – भारतीय जनजाति–बैगा इतिहास, संस्कृति, सामाजिक संरचना और स्थिति।

प्रस्तावना–भारत को सर्वाधिक सांस्कृतिक और भाषाई विविधता वाला देश होने का गौरव प्राप्त है, मूल रूप से अफ्रीका के बाद भारत में जनजातियों की संख्या सबसे ज्यादा है इस दृष्टि से छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों आदिवासियों की एक तिहाई से ज्यादा संख्या निवासरत है। यहाँ के भीतर स्थानों में निवास करने वाले वनवासी या जनजाति समूहों को संयुक्त रूप से आदिवासी कहा जाता है (ब्रेटेनिका और रफेल, 2013) जो द्रविड़ और इंडो आर्यों के पहले से भारत के मूल निवासी माने जाते हैं (गांधी, 1968 और रॉबर्ट, 1995) हालाँकि आदिवासी शब्द को 1930 के दशक में नेताओं द्वारा स्वदेशी लोगों को एक विभेदित पहचान देने के लिए गढ़ा था (मसानी, 1985) भारत के संविधान ने जनजातीय समूहों को सामाजिक और आर्थिक विकास के लक्ष्य के रूप में समूहबद्ध किया है (ब्रेटेनिका, 2015) राज्य सरकारों ने ऐतिहासिक रूप से समृध महत्वपूर्ण जनजातियों की घटती संख्या को देखते हुए उन्हें संरक्षित करने का प्रयास किया है जिससे उनकी जनजातीय कला, संस्कृति और प्राकृतिक मनीषा को बचाया जा सके। ऐसी ही एक महत्वपूर्ण जनजाति है बैगा, जो अधिकांशतः मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के सरहदी जिलों जैसे मंडला, डिंडोरी, शहडोल, बालाघाट और छत्तीसगढ़ के बिलासपुर, जगदलपुर, कबीरधाम जिलों के जंगलों में निवासरत है। बैगा जनजाति दुनियाभर की प्राचीन जनजातियों में से एक है। विशेषज्ञों के अनुसार बैगा भारतीय उपमहाद्वीप के प्रथम मानव सभ्यताओं के वंशज हैं जो गोंड, भूमिया, भुईया आदि परिवारों के रूप से अलग अलग समूहों में बंट गए थे। वर्तमान समय में प्रकृतिवादी एवं परम्परावादी कही जाने वाली बैगा आदिवासी समुदाय की आधुनिकता से मुठभेड़ होने के कारण कई समस्याओं ने जन्म लिया है। दुनियाभर में आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक विविधता का अध्ययन करने वाले शोधार्थी और विद्वानों ने इस समस्या पर अपनी चिंता व्यक्त की है इनमे उन्होंने आधुनिक शिक्षा, तकनीक, पुनर्वास, विस्थापन, स्वास्थ जैसे अहम मुद्दों के साथ संस्कृति को बचाए रखना एक बड़ी चुनौती माना है। जिसमें आदिवासी मान्यताओं, ज्ञान का वैज्ञानिक समझ के साथ विस्तार करना एक कसौटी है वहीं नयी पीढ़ी के सामने शहरी जीवनशैली को अपनाने की चाह है तो वही बुजुर्ग नव पीढ़ी को अपनी परंपरा से जोड़े रखने की कवायद कर रहे हैं। जनजातियों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भारतीय में द्रविडों या इंडो आर्यन जैसे वैष्णव एवं आर्य समाजों द्वारा आमतौर पर दलितों के विपरीत आदिवासियों को आंतरिक रूप से अशुद्ध नहीं माना जाता था (सिंह, 2008). मध्य काल में आदिवासी समुदाय इतना प्रभावी था कि कुछ क्षेत्रों में स्थानीय राजाओं द्वारा शासन करने के लिए आदिवासी अनुमोदन और समर्थन हासिल करना महत्वपूर्ण माना जाता था, (मसानी, 1985) और बड़े आदिवासी समूह मध्य भारत में अपने स्वयं के राज्यों को बनाए रखने में सक्षम थे (गांधी, 1968) गोंड राजा आदिवासी अभिजात वर्ग के उदाहरण हैं जो मंडला जैसे क्षेत्र में शासन करते थे वह न केवल अपने गोंड जाति के वंशानुगत नेता थे बल्कि गैर–आदिवासी समुदायों पर भी हावी रहे हैं जिन्होंने उन्हें सामंती राजा के रूप में मान्यता दी थी (नायक, 1956) इससे पता चलता है कि स्वदेशी आदिवासी समुदाय मुख्यधारा से जुड़ी समाज और जातियों के साथ एक साथ कदम मिलाकर चल रहा था अपितु शासन व्यवस्था में एक जरूरी भूमिका

निभा रहा था। 18वीं शताब्दी की शुरुआत में अंग्रेजों ने आदिवासियों के वन क्षेत्र और गैर–आदिवासी किसानों की बसी हुई भूमि, दोनों को तेजी से ब्रिटिश–नामित जमींदारों की कानूनी संपत्ति बना दिया जिससे नई मिली संपत्ति से अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सके (गुहा, 1983) इस व्यवस्था ने जंगलों और संसाधनों से वंचित आदिवासियों को साहूकारों से सूदखोरी दरों पर उधार लेकर आजीविका चलाने पर विवश कर दिया था केलकर, 1991) जमींदारी व्यवस्था के साथ औपनिवेशिक राज्य ने 1865 में भारतीय वन अधिनियम बनाया जिससे वन भूमि पर पूर्ण नियंत्रण किया जा सके और पारंपरिक वनवासी समुदायों की पहुंच को प्रतिबंधित किया जा सके (मधुसूदन, 2005) अतः ब्रिटिश शासनकाल के दौरान आदिवासी समुदायों द्वारा कई विद्रोह एवं आंदोलन किए गए। जनजातीय समूहों ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भी भाग लिया था। शहरी दृष्टिकोण में बैगा ऐतिहासिक रूप से समृद्ध बैगा जनजाति समुदाय के सुदूर जगलों में निवास होने के कारण मुख्यधारा से जुड़ी शहरी जनसंख्या अब भी इनके सांस्कृतिक अस्तित्व को लेकर अनजान है। इन्हें सभ्यता काल के वर्तमान जीवन के कथित प्रतिमानों से भिन्न होने के कारण असभ्य और आदिम माना जाता है (बिजोय, 2003) चूँकि आदिवासी समाज में पहनावा, रहन–सहन, खानपान, जीवनशैली, चुनौतियां, आनंद, मुख्यधारा से जुड़े आदमी के सामाजिक परिवेश से अलग हैं। आधुनिक समाज की इसी जिज्ञासा को देखते हुए सरकार ने इनके विकास और विस्तार को लेकर नए अवसर निर्मित किए है जिसके तहत कई क्षेत्रों को आदिवासी पर्यटन के रूप में विकसित करने की कोशश की गयी है। यह सारे प्रयास और योजनाएँ आदिवासी उत्थान में कितनी कारगर और कामयाब साबित हुई हैं यह शोध का विषय है। बैगाओं की वर्तमान जीवनशैली बैगाओं की दुनिया आज भी बेहद हैरतंगेज है पुरुष शरीर पर लंगोठी नुमा कपड़ा पहनते है जिन्हें स्थानीय भाषा में पंछा कहा जाता है। पुरुषों को बैगा संस्कारों के अनुसार बाल काटने की आजादी नहीं है ज्यादातर वह बालों को एकठ्ठा करके पीछे की ओर चोटी बाँध लेते हैं। लेकिन वर्तमान समय में ऐसे कई बैगा पुरुष हैं जो दाढ़ी और सर के बालों को कटवा रहे हैं। वह पैंट शर्ट और जींस जैसे परिधान भी पहनने लगे हैं। बैगा महुए से स्वयं बनाई गयी शराब और तेंदु पत्ते से से बनी बीड़ी बनाकर पीते हैं। बैगा महिलाएं शरीर पर घुटने तक साड़ीनुमा कपड़ा लपेटती हैं जिसे लुगड़ा कहा जाता है। वह अपने शरीर में हाथ पैर और चेहरे पर स्थानीय ‘बादी’ जाति की महिलाओं से गोदना गुदाती हैं। बैगा महिलाएं अक्सर नंगे पैर रहती हैं। कमर, गले और पैरों में चाँदी के आभूषण पहनने का प्रचलन है। जबकि नाक में किसी तरह का आभूषण नहीं पहनतीं जिसका मूल कारण है मुस्लिम संस्कृति के आगमन से पूर्व भारतीय संस्कृति में नाक का आभूषण पहनने का चलन नहीं था (उपाध्याय, 1977)। बैगा महिलाएं अपने बच्चों को पीठ पर झोलीनुमा कपड़े के सहारे बांध लेती हैं और कृषि, मजदूरी, आजीविका के हर मोर्चों पर पूरी सहजता से कार्य करती हैं। साप्ताहिक हाट या मेले के समापन के बाद एक दूसरे की कलाई पकड़ और गले मिलकर विदायी लेती हैं। अपने देश के ग्रामीण या शहरी पृष्ठभूमि में महिलाओं द्वारा गले मिलकर और कलाई पकड़कर एक दूसरे से अलग होने का प्रचलन नहीं है। बैगाओं का ये रिवाज महिलाओं की सामाजिक मजबूती और पारिवारिक भागीदारी में महत्वपूर्ण होने का प्रतीक है। जो उन्हें लैंगिक समानता देता है। आर्थिक आधार पर पिछड़ी ये जनजाति पारिवारिक प्रगतीशीलता की सूचक है।

बैगाओं की वर्तमान सामाजिक स्थिति–बैगा जनजाति जंगली कंद मूल, शहद, तेन्दु पत्ता, अचार, गोंद बेचकर परिवार का पालन पोषण करते है। महिलाएँ गृह निर्मित बाँस की सूपा, टोकरी बनाकर बेचती हैं। वर्तमान समय में बैगा पुरुषों और महिलाओं में मादक पदार्थों के सेवन की लत है। बैगाओं में मांसाहार जीवनशैली का एक जरूरी हिस्सा है अपितु मछली

पकड़ना, शिकार करना उनकी दिनचर्या का हिस्सा था चूँकि अब शिकार जैसी गतिविधियों पर शासकीय प्रतिबंध है तो वह जंगल, खेती, व्यवसाय, मजदूरी, रोजगार गारंटी योजना से होने वाली कमाई का अधिकांश हिस्सा अंधविश्वास, मदिरा, मछली और मांस में खर्च कर रहे है, आचरण के आधार पर कुरीतियों ने समाज को ज्ञान के प्रकाश से दूर कर दिया है। पुनर्वास और विस्थापन वन्यजीव अधिनियम 1972 के बाद से जंगली जानवरों को बचाने के प्रयास जारी हैं। इसके तहत सरकार ने वन क्षेत्रों को अभ्यारण तथा बाघ संरक्षित इलाकों में बदला है। इस कानून के तहत जानवरों के प्राकृतिक वास स्थलों पर मानवीय गतिविधियाँ प्रतिबंधित हैं। जबकि वन अधिकार अधिनियम 2006 वनवासी समुदायों को आजीविका के साथ–साथ वन संसाधनों पर व्यक्तिगत और सामुदायिक अधिकार देता है जिससे उन्हें वनों तक अपनी पहुँच बनाने की संस्थागत मान्यता मिली है (बीबीसी, 2016). चिल्फी घाटी के भोरामदेव अभ्यारण से सटे गाँवों में आदिवासियों को यह कहकर बेदखल कर दिया जाता है कि उनकी उपस्थिति जंगली जानवरों को डराती है, अतः वन अधिकार कानून भी बैगा आदिवासियों की मदद नहीं कर पाया है, यहाँ सैकड़ों की संख्या में ऐसे बैगा परिवार हैं जो हर साल किसी नयी जमीन पर खेती करते हैं, घर बनाते हैं और बेदखल कर दिए जाते हैं। यह दोनों कानून एक–दूसरे के विपरीत हैं। दूसरी वजह है कि उन्हें खनिज संसाधनों की उपलब्धता से विस्थापित होना पड़ रहा है।

साक्षरता शिक्षा वह कुंजी है जो मनुष्य की आजीविका में योगदान देती है। इससे विचारों को विस्तार मिलता है जिससे संसाधनों को बढ़ाने में मदद मिलती है और देश के विकास को गति भी मिलती है। वर्ष 2011 की जनगणना में इस जनजाति में औसत साक्षरता 40.6 प्रतिशत थी। पुरूषों में साक्षरता 50.4 प्रतिशत तथा महिलाओं में 30.8 प्रतिशत थी (जनसर्वे, 2011) लेकिन इस साक्षरता में 50 फीसदी से ज्यादा जनसंख्या प्राथमिक शिक्षा भी हासिल नहीं कर सकी है। इस साक्षरता दर में साक्षर बगैर शिक्षा, प्राथमिक, मिडल, माध्यमिक, उच्चतर और स्नातक की तालिका द्वारा औसत दर को बताया गया है. सरकार और स्वयंसेवी संगठन कोशिश कर रहे हैं लेकिन इसके कुछ खास परिणाम नजर नहीं आते। सरकार के लाख दावों के बाद भी बैगा आदिवासी की वास्तविक साक्षरता दर 20 फीसदी के आसपास ही है (बीबीसी, 2014)।

बैगा जनजाति पर सरकार का रुख—बैगा जनजाति को सांस्कृतिक और सामाजिक संरक्षण देने के लिए सरकार ने बैगा अभिकरण जैसे निकाए बनाए हैं और केंद्र ने इसे विशेष पिछड़ी जनजाति का दर्जा दिया है। घटती आबादी को देखते हुए 80 के दशक से ही परिवार नियोजन कार्यक्रमों पर प्रतिबंध लगाया है। लेकिन असलियत में इन प्रयासों को लेकर कई विवाद सामने आते रहें हैं ऐसे मामलों में आजीविका के लिए नसबंदी, पलायन जैसी घटनाएं शामिल हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार छत्तीसगढ़ में बैगा जनजाति की संख्या 89744 थी जो वर्तमान मीडिया रिपोर्ट्स के मुताबिक घटकर 43 हजार के आसपास रह गयी है (बीबीसी, 2014)

निष्कर्ष—बैगा जनजाति की कई परंपराएँ बहुत प्रगतीशील और स्वतंत्रत हैं। उनके लिए यह संस्कृति बनाम आधुनिकता का दौर है, एक तरफ मुख्यधारा से जुडना है तो दूसरी ओर संस्कृति को संवारे रखना है तो तीसरी तरफ जल, जंगल, जमीन, विस्थापन और पुनर्वास का मकड़जाल है। अन्य आदिवासी क्षेत्रों की तुलना में बैगा क्षेत्रों की स्थिति अच्छी नहीं है जहाँ बिजली, शिक्षा, सड़कों, अस्पतालों आदि बुनियादी जरूरतों की कमी है। बैगा जनजाति को नवीन सामाजिक राजनीतिक भागीदारी की जरूरत है। यह समुदाय सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और समृद्ध संस्कृति के बीच मामूली फर्क को समझ नहीं सका है। ज्यादातर जनसंख्या आज भी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा हासिल नहीं कर पायी है जबकि उच्चतर शिक्षा की दर तो बहुत कम है क्योंकि उन्हें आर्थिक,

सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है यही बैगा बाहुल्य स्कूलों में खराब प्रदर्शन का कारण है। हम ये कैसे सोच सकते है कि आधुनिक शिक्षा पैटर्न के साथ बैगा जीवन शैली, संस्कृति और परम्पराओं को संरक्षित किया जा सकता है। इसलिए यह शोध यह सुझाव देता है कि सरकारों को जनजातीय शिक्षा पद्धति में आवश्यकता अनुसार संशोधन करके उनकी भाषा, संस्कृति, प्राकृतिक ज्ञान, वेशभूषा और रिवाजों को वैज्ञानिक ढंग से शिक्षा प्रणाली में जगह देने की आवश्यकता है। इसमें सरकार का उद्देश्य केवल बैगा जनजाति की साक्षरता का स्तर बढ़ाने का न होकर उनकी सांस्कृतिक समृद्धि के साथ उन्हें विकसित करने का होना चाहिए। हजारों वर्षों से बैगा आदिवासी जंगलों में रहते हैं, कृषि कार्य करते हैं और गैर–इमारती लकड़ी, जड़ी बूटी, गोंद, अचार जैसे उत्पाद का उपभोग करते हैं लेकिन आजादी के पहले अंग्रेजों ने और बाद की सरकारों ने औद्योगिकीकरण पर जोर देने के साथ–साथ वनों को सिर्फ राजस्व के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में माना है जिससे वनों का कानून सम्मत आर्थिक दोहन हुआ है। सांस्कृतिक, आर्थिक मुद्दे को लेकर जनजातीय हितों के लिए सामाजिक संस्थान भी कार्य कर रहे हैं लेकिन सिकुड़ता हुआ वन क्षेत्र, वन्यजीवों की घटती संख्या और आदिवासी समुदायों का पतन इस बात के तथ्य हैं कि कोई संस्थागत कार्य ठोस नतीजे लेकर दिखायी नहीं देता क्योंकि इसमें क्रियान्वयन करने वाले प्रत्येक विभाग के अपने–अपने हित हैं। उदाहरण के लिए वन विभाग का ध्यान वन भूमि की सुरक्षा और इन जमीनों को अपने सीधे नियंत्रण में रखने पर अधिक है जबकि राजस्व विभाग मुख्य रूप से कर संग्रह बढ़ाने में रुचि रखता है। ऐसे परिदृश्य में आदिवासियों के हितों की अवहेलना हो रही है साथ ही वन्य जीवन भी संकटग्रस्थ हालत में है। ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण गौरवशाली जनजाति का दयनीय स्थिति में होना निश्चित ही संस्कृतिवादियों के लिए तकलीफदेह है। इस मामले में बैगा अभिकरण, राजस्व, ग्रामीण विकास और वन विभागों को मिल कर कार्य करने की आवश्यकता है। जिससे आदिवासी, वनों एवं वन्य जीवों का संरक्षण सुनिश्चित हो सके।

असिस्टेंट प्रोफेसर–इतिहास विभाग
एस.जी.जी.एस. कॉलेज, सेक्टर–26
चडीगढ़ मोबा. +91 76966 92079

Works Cited :

1. Britannica, T. Editors of Encyclopaedia (2015, December 22). Adivasi. Encyclopaedia Britannica.
   https://www.britannica.com/topic/Adivasi
2. Raphael Rousseleau, Claiming Indigenousness in India, Books and Ideas , 7 February 2013. ISSN : 2105-3030.
   URL : https://booksandideas.net/Claiming-Indigenousness-in-India.html
3. Mohandas Karamchand Gandhi (1968), The Selected Works of Mahatma Gandhi : Satyagraha in South Africa, Navajivan Publishing House, retrieved 29 July 2021.
4. Lok Sabha Debates ser.10 Jun 41-42 1995 v.42 no. 41-42, Lok Sabha Secretariat, Parliament of India, 1995, retrieved from Wikipedia, 29 July 2021.
5. Robert Harrison Barnes, Andrew Gray, Benedict Kingsbury (1995), Indigenous peoples of Asia, Association for Asian Studies, ISBN 978-0-924304-14-9, The Concept of the Adivasi: According to the political activists who coined the word in the 1930s.
6. Minocheher Rustom Masani; Ramaswamy Srinivasan (1985). Freedom and Dissent: Essays in Honour of Minoo Masani on His Eightieth Birthday. Democratic Research Service. The Adivasis are the original inhabitants of India. That is what Adivasi means: the original inhabitant. They were the people who were there before the Dravidians. The tribals are the Gonds, the Bhils, the Murias, the Nagas and a hundred more.

7. C.R Bijoy, Core Committee of the All India Coordinating Forum of Adivasis / Indigenous Peoples (February 2003), "The Adivasis of India - A History of Discrimination, Conflict, and Resistance"
8. R Singh (2000), Tribal Beliefs, Practices and Insurrections, Anmol Publications Pvt. Ltd., ISBN978-81-261-0504-5
9. Thakorlal Bharabhai Naik (1956), The Bhils: A Study, Bharatiya Adimjati Sevak Sangh.
10. Govind Kelkar; Dev Nathan (1991), Gender and Tribe : Women, Land and Forests in Jharkhand, Kali for Women, ISBN 978-1-85649-035-1
11. Guha, R. 1983. Elementary Aspects of Peasant Insurgency in Colonial India. Delhi: Oxford University Press,
12. Madhusudan, M. (2005). Rights and Wrongs: Wildlife Conservation and the Tribal Bill. Economic and Political Weekly, 40(47), 4893-4895. Retrieved August 1, 2021, from http://www.jstor.org/stable/4417419
13. CG Government. Retrieved from http://cgtiti.gov.in/PVTG.html
14. District census, 2011 https://www.censusindia.gov.in/
15. BBC Report, Retrieved from https://www.bbc.com/hindi/india/ 2014/11/141112 baiga tribe chhattisgarh du Sinha Sayak. Retrive from https://www.ideasforindia.in/tag-search/implementing-forest-rights-act-story-of-two villages- in maharashtrai- hindi.html
16. Upadhyay. Bhagwat Sharan. (1977). Ancient West Asia and India. P.7, Retrieved from https://www.pravakta.com/nath-in-nose/

राष्ट्रीय रक्षा नीति पर डॉ. अम्बेडकर के विचार

डॉ. प्रियंका मिश्रा
पोस्ट डॉक्टोरल फेलो
डॉ अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र, नई दिल्ली

डॉ. वरुण गुलाटी
एसोसियेट प्रोफेसर
डॉ अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र, नई दिल्ली

सारांशिका – प्राचीनकाल से ही किसी भी राज्य का प्रमुख कर्तव्य अपने नागरिकों के जन, धन की रक्षा करना है । यह रक्षा वाह्य और आन्तरिक दोनो होती हैं । आधुनिक युग मे राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा पूरी तरह से बदल गयी हैं । डॉ अम्बेडकर जी ऐसे विचारक थे जो व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास पर बल देते थे । उनका मानना था कि व्यक्ति के सभी हितों की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है । इसलिए उन्होंने अपनी पुस्तकों में भी व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर जोर दिया है और भारतीय संविधान में भी व्यक्ति के अधिकार और राज्यों के कर्तव्य को स्पष्ट किया है। उनके विचारों से प्रभावित होकर बाद में भारत सरकार ने भी राष्ट्रीय सुरक्षा नीति को अपनाया और डॉ अम्बेडकर के विचारों को मूर्त रूप प्रदान किया ।

बीज सूची – राष्ट्रीय सुरक्षा, आंतरिक सुरक्षा, राज्य, अंतर्राष्ट्रीयता , सविधान , डॉ अम्बेडकर, मानव मूल्य, नागरिक ।

प्रस्तावना – राज्यों की अवधारणा में बताया गया है कि राज्य का उदय किसी भी प्रकार के आक्रमण से अपनी प्रजा की रक्षा करना प्रत्येक राज्य का सबसे प्रमुख उद्देश्य होता हैं । चाणक्य ने भी कहा है कि प्रजा का सुख ही राजा का सुख और प्रजा का हित ही राजा का हित होता हैं । किसी भी राज्य के नागरिकों के हित मुख्यतः दो प्रकार से प्रभावित हो सकते हैं । जिसमे सबसे पहला पड़ोसी देशों से शत्रुता और देश के अन्दर आपराधिक प्रवृत्ति या अशांति का माहौल होना । किसी भी देश की समृद्धि का पैमाना उसके नागरिकों के विकास से माना जाता हैं। आधुनिक सन्दर्भ में नागरिकों का विकास का पैमाना आर्थिक के अतिरिक्त बौद्धिक,

सामाजिक– सांस्कृतिक रूप से माना जा रहा है।

विषय–वस्तु – आधुनिक समय में तकनीकी और नयी विचारधारा के कारण आज पूरा विश्व आपस मे एक सूत्र में बधा हुआ है। किसी देश के किसी भी प्रकार की समस्या से प्रभावित होने पर उसका अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव पड़ता हैं। अंतरराष्ट्रीय सम्बन्धों को गतिशील बनाये रखने या उनको प्रभावित करने की प्रवृत्ति में राष्ट्रीय सुरक्षा एक प्रमुख घटक हैं। राष्ट्रीय हितों का विकास तथा संप्रभुता और अंखडता की रक्षा करना ही राष्ट्रीय सुरक्षा का प्रमुख केन्द्र है। राष्ट्र का बहुमुखी विकास उसके सुरक्षा तंत्र के मजबूत होने, साथ ही राज्य में शान्ति बनी रहने से ही हो पायेगा ।

राष्ट्रीय सुरक्षा की समस्या की व्याख्यात्मक, विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक और निदान से सम्बंधित अधिकांश लेख शक्ति–संघर्ष और शान्ति एवं सुरक्षा की अवधारणा पर आधारित हैं। राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए दो पक्ष अपने विचार रखते हैं। पहला पक्ष अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए शक्ति के प्रयोग पर जोर देता हैं। तो दूसरा पक्ष आदर्शवादी विचारधारा को अपनाकर शान्ति और सहयोग से राष्ट्र की सुरक्षा को प्राथमिकता देता है। राष्ट्र व्यक्तियों की सामूहिक रूप से सदस्यता की स्थिति है तथा इनके द्वारा व्यक्तियों के कार्यो, निर्णयों एवं नीतियों का प्रतिनिधित्व एक विधिक अवधारणा द्वारा होता हैं। यह व्यक्तियों एवं समूहों में एकसूत्रता की भावना पैदा करता है, जिसे राष्ट्रीयता कहते हैं।[1]

राष्ट्रीयता के भाव से परिपूर्ण राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के राष्ट्रीय हितों को हानि पहुँचाते और अपने इस सत्य को न्यायसंगत ठहराते हैं। कोई भी राष्ट्र अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा के लिए सर्वप्रथम शांतिपूर्ण साधनों को अपनाए एवं उनके प्रभावहीन या असफल हो जाने पर युद्ध या सशस्त्र कार्यवाई करे। चाणक्य ने भी कहा है कि –राष्ट्रीय हितों की सिद्धि के लिए दुर्बल राजाओं को समझा–बुझाकर एवं यदि आवश्यकता हो तो कुछ देकर अपने अनुकूल बना लेना चाहिए, किन्तु जो राजा सबल हो, उसको भेद या दण्ड द्वारा वश में करना चाहिए।[2]

आधुनिक समय में प्रत्येक राज्य अंतर्राष्ट्रीय राजीनिति में सम्मानपूर्वक अपने राष्ट्रीय सुरक्षा को कायम रखने के लिए राष्ट्रीय हितों एवं राष्ट्रीय शक्ति के मध्य उचित सामंजस्य बनाये रखना अत्यंत आवश्यक है। राष्ट्रीय सुरक्षा एक व्यापक शब्दावली है, जिसका सम्बन्ध प्रादेशिक अंखडता एवं राजनीतिक प्रभुसत्ता की रक्षा करने के साथ–साथ बाह्य आक्रमणों से राष्ट्रीय एवं आन्तरिक मान्यताओं (सांस्कृतिक, राजनीतिक संस्थाओं, विश्वासों एवं मूल्यों) नागरिकों के जीवन और उनकी संपत्ति की रक्षा से है। यह अवधारणा है कि सेना के द्वारा ही राष्ट्र की सुरक्षा की जाती हैं, अंशतः ही सत्य है।[3] राष्ट्रीय सुरक्षा और विकास की एकरूपता की स्पष्टता, के. सुब्रमण्यम की परिभाषा से स्पष्ट रूप से प्रदर्शित की जा सकती है, जिसमे उन्होंने कहा कि 'राष्ट्रीय सुरक्षा का तात्पर्य केवल क्षेत्रीय अखण्डता की सुरक्षा नही वरन इसका तात्पर्य यह भी सुनिश्चित करना है कि वह देश तीव्र औद्योगिकरण की तरफ बढ़ रहा हो एवं इसके पास एक शक्तिशाली सुसंगठित समतावादी एवं प्रौद्योगिकी समाज निर्माण करने की क्षमता हो।[4] अर्थात किसी भी राष्ट्र के विकास में योगदान देने वाले सभी नकारात्मक तत्वों से उसकी रक्षा करना ही सही मायने में राष्ट्रीय सुरक्षा हैं ।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत जैसे नवोदित राष्ट्र को अपनी सुरक्षा देना एक प्रमुख प्राथमिकता बन गयी। भारत अपनी विशालता और विभिन्न प्राकृतिक क्षेत्र एवं प्रान्तीय विविधता के साथ मौजूद हैं। डॉ. राधाकुमुद मुकर्जी के शब्दों में –' भारत को मतों तथा पंथों, प्रथाओं तथा संस्कृतियों, धर्मो तथा भाषाओं, विभिन्न जातियों एवं सामाजिक संस्थाओं का अजायब घर कहा जा सकता है। परन्तु यह मृतक वस्तुओं तथा भौतिक पदार्थों का नही अपितु जीवित सम्प्रदाय एवं आध्यात्मिक व्यवस्थाओं का अजायबघर हैं।[5] भारत के विभिन्नता वाले स्वरूप के कारण भारत को कई समस्या का सामना करना पड़ा। इन समस्याओं में भाषावाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, अलगाववाद, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, गरीबी,

आतंकवाद, नक्सलवाद प्रमुख हैं। ये सभी समस्याएँ भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के साथ ही साथ आन्तरिक सुरक्षा को व्यापक रूप से प्रभावित कर रही हैं ।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर आधुनिक भारत के ऐसे विचारक थे, जिन्होंने मनुष्य के सम्पूर्ण विकास पर बल दिया। उनका मानना था कि व्यक्ति को सर्वप्रथम आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना चाहिए, जिससे कि वो समाज मे अपना सम्मानजनक स्थान पा सके। उनकी आर्थिक समस्याओं के प्रति बहुत ही व्यवहारिक सोच थी। वे मानते थे कि भारत के पिछड़ेपन का मुख्य कारण भूमि–व्यवस्था के बदलाव में देरी है, इसका समाधान लोकतांत्रिक समाजवाद है जिससे आर्थिक कार्यक्षमता एवं उत्पादकता में वृद्धि होगी तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कायापलट संभव होगा, आर्थिक समस्याओं के प्रति उनके दृष्टिकोण की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे अहस्तक्षेप (Laissez & faire) तथा वैज्ञानिक समाजवाद (scientific Socialism) की निंदा करते थे।[6]

राष्ट्रीय सुरक्षा के बारे में डॉ. अम्बेडकर जी का कहना था कि भारत ऐसे राष्ट्र समूहों से घिरा हुआ है, जो उसका हमेशा विरोध करते रहें। वह पंडित नेहरू जी के विदेश नीति के प्रबल विरोधी थे। उन्होंने आन्तरिक समस्याओं के लिए नेहरू और कांग्रेस को दोषी माना। अम्बेडकर जी ने इस बात पर ज्यादा जोर दिया कि, भारत की दूसरी राजधानी दक्षिण भारत में होनी चाहिए। वे कहते हैं, 'देश की फौजी सुरक्षा और सत्ता, प्रशासन में समान सहभागी की दृष्टि से दक्षिण में भारत की उपराजधानी अवश्य होनी चाहिए। मेरी बहुत दिनों से यह राय है कि हैदराबाद, सिकंदराबाद व बोलाराम का इलाका केंद्र सरकार अपने अधीन करें और वहां उपराजधानी कायम करें। दिल्ली में रहकर राज्य चलाने की बात आती है तब मुझे उनकी फौजी कौशल पर हंसी आती है। हमारा राष्ट्र फौजी बनाना हो तो दक्षिण भारत में राजधानी बनाना राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से उपयोगी होगा। आज केंद्र सरकार में उत्तर भारत के लोगों का प्रभुत्व है। राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री के पद दो प्रांतों के बड़े लोगों में बारी–बारी से बंटते रहेंगे। दक्षिण भारत के सामान्य लोग नौकरी के लिए आज भी दिल्ली नहीं जा सकते और प्रशासन व्यवस्था में हिस्सा मिलना भी मुश्किल हो गया है। भारत के सभी लोग एक हैं यह यद्दपि सच है, लेकिन व्यवहार में यह भावना निरर्थक है। राजनीति में यह उदारता संकट में डालती है व सीधे–साधे लोगों का घात होता है। इसी कारण हैदराबाद में उपराजधानी हो तो दक्षिण भारतीयों को सरकारी व्यवस्था में स्थान मिलेगा।[7]

डॉ अम्बेडकर जी ने आर्थिक लोकतंत्र व आर्थिक समानता के बारे में अपने विचारों को बहुत से लेखों के माध्यम से कहा है। संविधान सभा के समक्ष अपने अंतिम भाषण में उन्होंने देश की सुरक्षा के बारे में अत्यंत मौलिक विचार रखे हैं। वे कहते हैं, 'हमारे सामाजिक व आर्थिक जीवन में सामाजिक व आर्थिक ढांचे के कारण हर व्यक्ति के समान मूल्य के तत्व को हम ठुकराते रहने वाले हैं। हम यदि अधिक समय तक इसे अस्वीकार करते रहे तो हमारा राजनीतिक लोकतंत्र खतरे में पड़े बिना नहीं रहेगा।[8]

राष्ट्रीय सुरक्षा का सब से बड़ा मुद्दा सामाजिक एकता होता है। सामाजिक एकता पैदा होने के लिए सामाजिक लोकतंत्र निर्माण होना चाहिए। सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ समाज की व्यवस्था स्वतंत्रता, समता व बंधुत्व इन तीन तत्वों के आधार पर होनी चाहिए। इनमें से बंधुता का तत्व सब से महत्वपूर्ण है। बाबासाहब कहा करते थे, सभी भारतीयों को एक दूसरे से सगे भाइयों की तरह स्नेह करना चाहिए। यह सामाजिक एकता का बुनियादी तत्व है, सामाजिक एकता हो तो समाज किसी भी तरह का विदेशी आक्रमण नहीं सहता और उसे पराजित करता है। इंग्लैंड, रूस, जापान, फ्रांस, जर्मनी का इतिहास इस बात को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। देश की सुरक्षा का विचार केवल फौज तक सीमित न होकर उससे भी अधिक व्यापक है। राष्ट्रपुरुष डॉ. बाबासाहब आंबेडकर ने हमारे समक्ष इस

विचार को सभी पहलुओं से रखा है। समाज व सरकार को उसका अनुशीलन करना चाहिए।[9]

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए डॉ अम्बेडकर जी ने संघात्मक राज्य की स्थापना, केन्द्र को ज्यादा शक्ति और राष्ट्रपति को प्रदत्त आपातकालीन शक्तियों को संवैधानिक स्वरूप प्रदान की । वह राज्यों को भाषा के आधार पर पाटने के पक्ष में थे। भारत सरकार ने राष्ट्रीय सुरक्षा नीति को प्रभावी बनाने के लिए 1980 ईस्वी में राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम लागू किया। साथ ही राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार बोर्ड का भी गठन किया गया है। भारतीय सविधान ने जहाँ केंद्र और राज्यों को शक्ति प्रदान की, वहीं नागरिकों को मौलिक अधिकार और संवैधानिक उपचारों का भी अधिकार प्रदान करके उनकी स्वतंत्रता को बरकरार रखने का प्रयास किया गया है। भारत सरकार ने राष्ट्रीय सुरक्षा नीति को बनाते समय डॉ. अम्बेडकर के विचारों को प्राथमिकता में रखा। भारत मे अनेकता में एकता बनाये रखने के लिए डॉ. अम्बेडकर की सोच दूरगामी थी।

डॉ अम्बेडकर ने भारतीय संविधान की धारा 51 में भारतीय विदेश नीति के निम्न उद्देश्यों को लिखा है –

अंतर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा ।

अंतर्राष्ट्रीय कानूनों की एवं विभिन्न राष्ट्रों की पारस्परिक संधियों का सम्मान करने की भावना ।

राष्ट्रों के मध्य न्यायपूर्ण एवं सम्मानपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखना ।

अंतरराष्ट्रीय विवादों को मध्यस्थता द्वारा सुलझाने की भावना को प्रोत्साहित करना ।

भारतीय संविधान में राष्ट्र की एकता और अखंडता पर जोर दिया गया है, अनुच्छेद 51क में कहा गया है कि–सभी नागरिकों का यह कर्तव्य है कि वे भारत की सम्प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे।[10] डॉ.अम्बेडकर जी विदेश नीति के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीयता सद्भाव को बढ़ाना चाहते थे, वह सभी गुटों से संधि के पक्ष में थे । नेहरू जी की विदेश नीति की उन्होंने समय–समय पर आलोचना की ।

निष्कर्ष – वर्तमान राष्ट्रीय सुरक्षा समस्याओं का अवलोकन किया जाय तो हम यह कह सकते हैं कि आधुनिक समय मे राष्ट्रीय सुरक्षा के मायने और आयाम दोनों ही समय और स्थिति के अनुसार परिवर्तित होते जा रहे हैं। राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए राज्य की वाह्य और आन्तरिक सुरक्षा के साथ आम नागरिकों एवं समाज के वैचारिक नैतिक विकास के अवसरों की सुरक्षा अत्यंत ही महत्वपूर्ण हैं। साथ ही राष्ट्रीय सुरक्षा की व्यापक अवधारणा डॉ. अम्बेडकर के विचारों के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा की भावना में विकसित हो रही हैं ।

मोबा. +91 90640 74291

<u>संदर्भः–</u>

1. फड़ीया, बी. एल, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, साहित्य भवन, 2005, आगरा पृष्ठ संख्या 89
2. हेरल्ड डी लॉसवेल और अग्राहम कैप्लन, पावर एंड सोसाइटी, ए फ्रेमवर्क ऑफ पोलिटिकल इन्कायरी, येल यूनिवर्सिटी प्रेस,1950, पृष्ठ 75
3. Strategic analysis,Jan & march, 1989, P- 281
4. Subrahmanyam ,k, our national security, p- 885
5. पीएचडी थीसिस, राष्ट्रीय सुरक्षा के आयाम, वीर बहादुर सिंह,पूर्वांचल विश्वविद्यालय, 2005
6. कुमार, प्रवेश, डॉ अम्बेडकर के सामाजिक– आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता,न्यूज18 हिन्दी ऑनलाइन, 14 अप्रैल 2021
7. पतंगे, रमेश, हिन्दी विवेक (पत्रिका) ऑनलाइन, राष्ट्र सुरक्षा विशेषांक, मुंबई, 2020
8. पतंगे,रमेश, हिन्दी विवेक (पत्रिका) ऑनलाइन, राष्ट्र सुरक्षा विशेषांक, मुंबई, 2020
9. पतंगे,रमेश, हिन्दी विवेक(पत्रिका) ऑनलाइन, राष्ट्र सुरक्षा विशेषांक, मुंबई, 2020
10. कश्यप , सुभाष, हमारा सविधान, राष्ट्रीय न्यास परिषद्, नई दिल्ली ,1995, पृष्ठ 61

हिन्दी कहानी में वृद्ध जीवन

– अनिता गोयल

सार संक्षेप (Abstract)

जीवन अभी समाप्त नहीं हुआ। आशा को थामना जरूरी है। उत्साह को बनाए रखना आवश्यक है। ईश्वर के द्वारा दिया गया जीवन पूर्णता की ओर अग्रसर है, पर अभी नहीं हुआ है। जब अंत नहीं आया तो अंत की तैयारी पहले से क्यों? इस बात की दृढ़ता पहले स्वयं अपने मन में जगानी होगी और दूसरों को भी अपनी उपयोगिता का एहसास कराना होगा। स्वयं, अपने को अपने लिए उपयोगी माने तभी दूसरा आपको उपयोगी समझेगा। जीवन की संध्या वेला रोज मृत्यु का इंतजार करने के लिए नहीं अपितु उत्साह के साथ अपने जीवन यात्रा को गति देने के लिए है। इन्ही सब बातों को लेकर आज की हिन्दी कहानी वृद्ध विमर्श को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में प्रस्तुत कर रही है।

बीज शब्द

वृद्धावस्था, सेवानिवृत्ति, अकेलापन, मृत्यु, भय, लालसा, उपेक्षा, विमर्श, बीमार, बोझ, आंतरिक मनोदशा।

समाज की महत्वपूर्ण इकाई परिवार है और परिवार उसके सदस्यों से निर्मित होता है। भारतीय परिवार की कल्पना जब हम करते है तो वहां हंसता खेलता बचपन, ऊर्जा से भरपूर युवा और संतुष्ट वृद्ध की छवि दिखाई देती है। ऐसे ही परिवारों को देख और सुन कर हम बड़े हुए हैं। अधिकांशतः वृद्धावस्था हमारे समाज में शाप नहीं थी बल्कि बुजुर्ग अपने परिवार का सम्मानित सदस्य हुआ करता था। अपने पुत्र, पुत्रवधू, नाति–पोतों से सम्मान पाते बुजुर्ग कभी अपने भविष्य के प्रति भयाकांत नहीं थे, ना ही अपने जीवन की सांझ में अकेलेपन और निराशा के अंधकार से घिरे हुए थे। शरीर से जरूर निर्बल होते जाते पर परिवार का साथ आत्मा को निर्बल नहीं होने देता। आज परिस्थितियां बदल चुकी है। जिन बच्चों का पालन, माता–पिता पूर्ण तन्मयता से करते हैं। अपने शौक, अपनी आवश्यकताएं छोड़ बच्चों के लिए धन जुटाते हैं। वहीं बच्चे वृद्धावस्था में माता–पिता को बोझ समझने लगते हैं।

साहित्य समाज का दर्पण है। समाज के पात्र ही साहित्य के पात्र होते हैं इसलिए समाज में आया परिवर्तन साहित्य के पन्नों पर भी अवश्य अंकित होता है। जीवन से जुड़ा कथा साहित्य भी इससे अछूता नहीं है हिंदी उपन्यास व कहानी दोनों में ही इस हाशिए पर आ चुके वर्ग की आंतरिक मनोदशा, परिवार व समाज में उसके स्थान की अभिव्यक्ति और इस समस्या की तरफ एक विमर्श की स्थिति प्रस्तुत की जा रही है। हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की उपस्थिति प्रेमचंद और प्रेमचंद के आसपास की कुछ कहानियों से ही मिलने लगती है परंतु अभी पिछले कुछ दशकों से इस विषय पर लेखन कार्य अधिक हुआ है इसका कारण है कि एक तरफ वृद्धों की जनसंख्या में वृद्धि हुई है क्योंकि लोग दीर्घायु हुए हैं। आने वाले दशकों में 60 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों की संख्या में और बढ़ोतरी होगी जो मध्य एवं उच्च आय वर्ग में होंगे तथा आर्थिक दृष्टि से ठीक–ठाक स्तर पर होंगे। जैसे–जैसे वृद्धों की जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। वृद्धों की समस्याओं में भी बढ़ोतरी हुई है। समाज में वृद्धों की इस समस्या के पीछे कई कारण हो सकते हैं। आज बच्चों के लालन–पालन शिक्षा पर खर्च बढ़ा है परिणाम यह हुआ है कि कटौती माता–पिता पर होने वाले खर्च में की जा रही है। इसके साथ ही औद्योगिकरण, शहरीकरण और उपनिवेशवादी संस्कृति व्यक्ति के भीतर के रस को सोख उसे शुष्क, हृदय हीन, स्वार्थी बना रही हैं। अपने माता–पिता को बोझ समझने की प्रवृति इसी का परिणाम है।

शंभूनाथ लिखते है 'उपभोक्तावाद का अंतिम लक्ष्य है आदमी को उपभोग पशु मे रूपांतरित कर देना जब आदमी की जरूरते उनके छद्म जरूरतों से बदल

जाएगी और खूब कमाओ खूब उपभोग करो कि संस्कृति के बाहर झांक नहीं पाएगा तब वह अपनी अंतिम परिणीति में एक उपभोग पशु ही होगा। वह सिर्फ मजा चाहेगा, फास्ट फूड से मिले या पूजा कीर्तन से। वह केवल दिखावा और उतेजना पैदा करने वाली वस्तुओं की ओर आकर्षित होगा, वह थोड़ा भी उधर नहीं ताकेगा जिधर उसे अपना दिमाग खटाना पड़े।'

समाज की प्रमुख इकाई व्यक्ति के चरित्र में आया यह संस्कारजन्य बदलाव, समस्याओं और उलझनों को बढ़ाने वाला है। जिसका शिकार सूर्यास्त की ओर बढ़ता हमारा बुजुर्ग भी हुआ है, जो आज शारीरिक, मानसिक, भावात्मक और आर्थिक रूप से दूसरे पर निर्भर है। परन्तु बदले में उसे तिरस्कार, अपमान, अकेलापन, रूखापन प्राप्त होता है। बुजुर्ग हास्य पर पहुँचते जा रहे हैं। नई पीढ़ी परिवर्तन की दौड़ में भाग रही है। बुजुर्ग अपने ही पौध का साथ चाहते है परन्तु कुलांचे भरती पीढ़ी के साथ दौड़ने का सामर्थ्य उनमें नहीं। इस दौड़ में यदि वृद्ध माता–पिता का उत्तरदायित्व उन पर हो तो यह उत्तरदायित्व उन्हें अपने पांव पर बंधा पत्थर महसूस होता है। आज समाचार पत्रों में टीवी चैनल पर ऐसी अनेक घटनाएं देखने सुनने में आती है कि संतान के द्वारा अपने सृष्टा की हत्या कर दी गई। कभी उत्तर दायित्व से मुक्त होने के लिए तो कभी माता–पिता की जायदाद वसीयत प्राप्त करने के लिए। मां–पिता जिन्होंने तुम्हें जीवन दिया अपने शौक ताक पर रखकर तुम्हारे लिए साधन जुटाए वह आज तुम्हें बोझ लगने लगे। क्या यही है हमारी आधुनिकता?

हिंदी कहानी इस उभरती हुई समस्या की तरफ पूर्ण सचेत दृष्टि से नजर बनाए हुए हैं। इस संदर्भ में प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' को यदि हम शुरूआत का बिंदु माने तो वह बूढ़ी काकी जिसने अपनी जायदाद भतीजे को सौंप दी है और जिसे केवल अच्छे भोजन की लालसा है परन्तु वह अपने भतीजे और भतीजे की बहू से तिरस्कार ही पाती हैं। लेकिन अंत में प्रेमचंद, बहु रूपा में ग्लानि की उपस्थिति दिखाते हैं। वह उस समय के लिए और आज के लिए भी एक समाधान है। भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' में माँ एक वस्तु के रूप में परिवर्तित हो गई है। यहां पुत्र में ग्लानि नहीं है लेकिन मां आज भी पुत्र की तरक्की के लिए कार्य करने को उत्सुक है। ऐसा दिखाकर भीष्म साहनी, समाज व आज की पीढ़ी के सामने, माता–पिता के द्वारा किए गए कार्यों की अहमियत रखने में तो समर्थ हुए हैं।

वृद्धावस्था के साथ सेवानिवृति शब्द जुड़ा हुआ है। सेवानिवृति को लेकर हिंदी में कई कहानियां लिखी गई है और यहां पर वृद्ध महिला और वृद्ध पुरूषों की स्थिति में एक अंतर महसूस किया जा सकता है क्योंकि हिंदुस्तानी मर्द, औरत की तरह घर के कामों में हाथ नहीं बंटा पाता इसलिए बुढ़ापे में उसका मूल्य और कम हो जाता है। मृदुला की कहानी 'बेंच पर बूढ़्ढ़ा' जिसमें नितिन सोलंकी जो रिटायर हो चुके हैं, और उनकी पत्नी का देहांत भी हो चुका है।

'लंबे चौड़े हवादार लोदी गार्डन में हरियाली और आरामदेह बेंच जरूर थी पर नितिन को वक्त अकेले जाया करना पड़ता था।'

जिस साथ की लालसा नितिन को है वह उसे नहीं मिलता। अकेलापन निराशा की हद तक पहुंच जाता है।

'अब कोई मोटिवेशन ही नहीं न पैसा न यश सब पा लिया सब पाकर चुक भी गया अब तो याद भी नहीं आती उन दिनों की।'

नितिन का दोस्त बी.के. भी कमोबेश इसी तरह का एकाकी जीवन जीने को मजबूर है।

संतोष श्रीवास्तव की कहानी 'आकारों में कोहरा' भी सेवानिवृति के पश्चात की ऐसी स्थिति को उजागर करता है।

'फिर वही व्यर्थता का कचोटता बोध। कैसी रौबदार जिंदगी थी। अब जाने क्या हो गया है। आदमी जब अपने फर्ज से निपट जाता है, खासकर वह वक्त जब वह रिटायर हो चुका होता है, कितना जानलेवा होता है सब कुछ। जैसे बार–बार दोहराया जा रहा हो– हमें अब तुम्हारी जरूत नहीं...हमें अब तुम्हारी जरूरत नहीं।'

'आकांक्षाओं से परे' कहानी में भी एक रिटायर वृद्ध की कथा कही गई है। जिसकी स्वयं अपने घर में विशेष इज्जत नहीं है। राहुल और मनोज उनके पुत्र आर्थिक रूप से समृद्ध है परंतु वृद्ध माता–पिता से इनका भावात्मक संबंध नहीं है। पत्नी और स्वयं रिटायर वृद्ध अपने ही पुत्र और पुत्रवधू के द्वारा अपमानित होते हैं। पिता का कमरा बाहर से अंदर पिछवाड़े की तरफ शिफ्ट कर दिया जाता है। उनके द्वारा संजोइ गई वस्तुएं उसी कमरे में रख दी जाती है जैसे मां पिता भी घर का कचरा हो। पिता की बीमारी, पुत्र के लिए बोझ है कहीं ना कहीं पुत्रों के द्वारा माता पिता के प्रति इस प्रकार का व्यवहार आज की पीढ़ी की कर्तव्य हीनता की दास्तान कहती है।

रिटायर मिस्टर वर्मा को पत्नी कौशल्या का साथ है परंतु कौशल्या घर के कामों में व्यस्त रहती है। बहू की टोका–टोकी को सहन करती है परंतु फिर भी सामंजस्य बनाने का प्रयास करती है।

कौशल्या के माध्यम से वृद्ध स्त्री की व्यथा साकार होती है। अपने ही द्वारा बनाए हुए, सजाए हुए घर में एक परायापन का एहसास करती है। उम्र के इस पड़ाव पर जब भी दांपत्य जीवन की कोमल भावनाएं उमड़ती है स्वयं उन भावनाओं को दबा कर सोचती है 'मगर इस उम्र में' ऐसी यथार्थ स्थितियों को अभिव्यक्त करती 'आकार में कोहरा' कहानी स्त्री और पुरूष मे मन की छवियों को स्पष्टता से अंकित करती है।

'मां का दर्द' कहानी में एक वृद्ध स्त्री की करूण कथा कही गई है जिसकी बेटी पत्र के माध्यम से मां की व्यथा को अपनी बहन के सामने अभिव्यक्त कर रही है। तीन पुत्र व चार पुत्रियों की जन्म दात्री स्त्री आज किस नरक को भोगने को विवश है। जिसे देखकर बेटी का हृदय चित्कार कर उठता है। मां के शरीर पर बने चकते पुत्र और समाज की वह विद्रुपता का दर्शाते हैं जहां स्वार्थ के आगे कुछ नहीं।

'क्या मां का गला दबाकर मारने का प्रयास किया गया था? क्या मां का हाथ पकड़ कर जोर से घसीटा गया था? मैं भाभी की आंखों में आंख डाल कर पूछती हूं, भाभी। ऐसे निशान मां के शरीर पर और कहां कहां है?'

एक स्त्री की वृद्धावस्था और उस पर वैधव्य, जीवन के लिए अभिशाप से कम नहीं। अकेलापन और बीमार शरीर संवेदना की आकांक्षा करता है। परंतु बदले में मिलता है दुत्कार, तिरस्कार। 'प्यासी रेत' कहानी में इस तिरस्कार की ध्वनि स्पष्ट सुनाई देती है। 'अम्मा क्या बात है? हमेशा खड़खड़ करती रहती है। चुप भी रहा कर सबको अपने–अपने काम है – 'कहां तक बार–बार आएंगे तेरे पास । अरे, कोई खाली थोड़े ही बैठा है।'

इसी प्रकार एक विधवा स्त्री अपने द्वारा लगाए वृक्ष के फलने–फूलने पर उसकी शीतल छाया चाहती है परंतु बदले में उसे मिलती है मरूस्थल की 'तपती रेत'।

मरूस्थल की इस तपन को 'तपती रेत' कहानी में अनुभव किया जा सकता है।

वृद्धावस्था में शारीरिक रूप से आने वाली परेशानियां भी एक बहुत बड़ी समस्या के रूप में सामने आती है। हिंदी की कई कहानियों में शारीरिक दुर्बलता और अक्षमता की अभिव्यक्ति लिखी गई है। यह अक्षमता केवल शरीर की कमजोरी ही नहीं बल्कि मन में उत्पन्न होने वाले उत्साहहीनता की अभिव्यक्ति भी है। यादवेंद्र शर्मा चंद्र की कहानी 'अपंग' वृद्धवस्था की अपंगता को गहराई से अभिव्यक्त करती है। समाज में ऐसा माना जाता है कि जब पुत्र का विवाह हो जाता है उसके पश्चात वह अपने माता पिता के प्रति अनासक्त हो जाता है और वह उनकी देखरेख अच्छे से नहीं करता, परंतु एक बेटी सदा मां–पिता के दर्द को महसूस करती हैं। 'अपंग' कहानी में एक बेटी के माध्यम से पिता को प्राप्त होने वाले अकेलेपन की स्थिति से उपजी अनंगता की अभिव्यक्ति की गई है। हरबंस जिसकी पत्नी का देहांत हो चुका है, अपनी बेटी के साथ रहता है और अपनी बेटी दीप्ति के लिए ही उसने पुनर्विवाह भी नहीं किया था। वही बेटी आज हरबंस के प्रति किसी प्रकार के अपनेपन की अनुभूति नहीं रखती और यह उसके लिए सामान्य है।

'वह सोचने लगा कि आदमी किसी जानवर या पक्षी को अपंग बनाते समय जल्लाद जैसा तो होता है पर कोई बेटी अपने बाप को किस तरह अपंग बना सकती हैं, यह तो कोई वाप सोच भी नहीं सकता।'

वृद्धावस्था जीवन की ढलान का सोपन है, जो व्यक्तित्व, स्वास्थ, सौंदर्य, जीवटता, उत्साह युवावस्था में होता है, धीरे–धीरे क्षीण होने लगता है। 'लौटता हुआ अतीत' कहानी के भीतर समाहित एक और कहानी का मुख्य पात्र **नेकीराम** भी ऐसी ही कहानी है जो जीवन के संध्या काल में आने वाले इन परिवर्तनों का जीवंत प्रतीक है परंतु अनिता और दीपक के प्रति उसके भीतर जो प्रेम है उसके वशीभूत होकर वह उन्हें आशीर्वाद देने उमड़ पड़ता है परंतु अनिता उनकी सीरत को नहीं सूरत को ही कोसती रहती है।

'पोपले गाल, टूटे हुए दांत, मुंह से निकलती झाग। जब देखो बिना आवाज – खटके के लंबा झोला लटकाए चले आते हैं–एक खिलौना तो चाहिए ही।'

नई पीढ़ी वृद्धों की शारीरिक स्थिति को देख वितृष्णा का भाव रखती है। वृद्धावस्था में शारीरिक परिस्थितियों के अतिरिक्त मानसिक दृष्टि से भी कई परिस्थितियां मनुष्य के समक्ष उपस्थित होती हैं।

'वृद्धावस्था में मानसिक स्थिति को भावनात्मक ग्रंथि प्रभावित करने लगती है जिससे हीनता की भावना एवं असहायता जैसे अलग–अलग लक्षण देखे जा सकते हैं, जिसमें व्यक्ति को किसी न किसी मनोवृत्ति का शिकार होने का खतरा रहता है। इस तरह से कई मनोवैज्ञानिक समस्याएं हो सकती है–विचारधारा, पसंद, दृष्टिकोण इत्यादि में स्थिरता आ जाने से भी समस्याएं उत्पन्न होती है।'

प्रियदर्शन द्वारा अभिव्यक्त इन विचारों की अभिव्यक्ति भी कई हिंदी कहानियों में देखी जा सकती है। गीतांजलि श्री ने अपनी कई कहानियों में वृद्धों की इन स्थितियों को उजागर किया है। इस संदर्भ में भीतराग, इति, मार्च मां और सकुरा कहानियां उल्लेखनीय है।

भीतराग, कहानी में वृद्धावस्था में मृत्यु के भय को रेखांकित किया गया है। कौन जाने कब ..... का प्रश्न उन्हें रात दिन भयभीत रखता था। रात्रि में यह भय और बढ़ जाता। रात्रि का अकेलापन इस भय को और भयावह बना देता। मीता और नरेश जब तक जगे रहते गिरधारी जी आधी–चौथाई झपकी ले पाते। इधर बती ऑफ हुई और उनके अदर बती झट से ऑन हो जाती।

'आँखें जबरन बंद करें तो तरह–तरह की आकृतियां दिखती जातीं– खुली आंचों, चढ़ी पुतलियां, काठ–सा बदन, बजान बाहर को तिरछी लटकती आदि आदि। पट से आंखें खोल देते तो दिमाग तजुर्वे कार आवाज में सुनाने लगता–आखिर फलाने के संग क्या हुआ था, खरबूजा खाया और पेट चल पड़ा, सात दफे बाथरूम गया और फिर टोटल गया।'

मृत्यु का यह, भय एक अकेले वृद्ध को किस प्रकार की अवस्था में पहुंचा सकता है, उसका सटीक विश्लेषण गीतांजलि श्री करती हैं।

'मार्च मां और साकुरा' कहानी में 70 वर्ष की मां को प्रकृति में खिले फूलों के समान, खिलते हुए, अभिव्यक्त करते हए लेखिका वृद्धावस्था के बीच मौजूद रोशनी की तलाश करती है। जिम्मेदारियों से तनिक मुक्त होकर 70 वर्ष की स्त्री किस प्रकार 16 बरस की युवती बन जाती है। इस विशिष्ट कथ्य के माध्यम से लेखिका वृद्ध मन में सुप्त भावनाओं की सच्ची अभिव्यक्ति करती है। इस कहानी में दर्शाया गया है कि वृद्धा अवस्था जीवन का सांध्य काल है, जीवन का अंत नहीं है। **इति** कहानी में 80 से ऊपर की उम्र के वृद्ध की कहानी है जो रिटायर अफसर है। अच्छी खासी पेंशन उसे मिलती है परंतु बेटे और बेटियों के घरों के बीच एक जिम्मेदारी के रूप में बंटते रहते हैं। उनकी संतान, दामाद और पुत्रवधू इस जिम्मेदारी को संभालते हैं। 'इति' कहानी वृद्ध विमर्श के अंतर्गत कुछ अलग तरह की कहानी है। वृद्धजीवन की अपेक्षा वृद्ध मृत्यु इस कहानी की मुख्य घटना है। पिता अपने जीवन के अंतिम दिनों में दंद्रियों पर लगाम नहीं लगाना चाहते। बाहर की चाट, पकौड़ी, मिठाई जिनसे

उनकी तबीयत खराब होती है उन पर अधिक आसक्त है। घर की युवा नौकरानी की तरफ भी वह आसक्त है।

स्वयं वह किसी के लिए कुछ नहीं करते पर घर के प्रत्येक सदस्य से अपने लिए कुछ न कुछ करवाते रहते है। रात्रि के 3.00 बजे उठकर सबको जगाते, कहते कि सुबह हो गई। उनकी मृत्यु पर भी भावात्मक दुख कहीं महसूस नहीं होता। पिता एक जिम्मेदारी है जिसे सभी को संभालना था। विशेष रूप से मां को। मां को यह जिम्मेदारी अधिक निभानी थी। उनकी मृत्यु किसी की आंखों में आंसू की अपेक्षा जिम्मेदारी से मुक्त होने का एहसास अधिक जगाती है। पिता की मृत्यु पर उन्हीं की बेटी इस यथार्थ को अभिव्यक्त करते हुए कहती है।

'पर पहले हम यही कहते कि बेठे रहते हैं बेकार, बेढंगे, बैढ़ब, खुचड़, खूसट, अस्त—व्यस्त, अड़चन बने, किसी के लिए कुछ ना करते और हर किसी से अपने लिए कुछ ना कुद करते और बस केवल चिड़चिड़े।'

मां—पिता की जिद्दी प्रवृति, अस्त—व्यस्त जिंदगी से सदा व्यस्त रहती और उनके सब काम करती। प्रस्तुत कहानी में वृद्ध स्वार्थी बन परिवार के प्रत्येक सदस्य से अपनी पत्नी से भी अपने लिए कुछ ना कुद करवाता रहता है। वह स्वयं को कभी वृद्ध नहीं समझता।

'पर खुद शायद अपने को बीते दिनों का रूपवान शहजादा ही देखते अभी भी।'

मूल रूप से प्रस्तुत कहानी में वृद्धा अवस्था में उत्पन्न होने वाली परिवर्तित आकांक्षाओं और समाज का उसके प्रति नजरिया क्या है? इसकी यथार्थ अभिव्यक्ति की गई है। वृद्ध पिता की मृत्यु भावात्मक दुख की अपेक्षा जिम्मेदारी से मुक्ति के एहसास के रूप में अधिक अभिव्यक्त हुई है। यही इस कहानी का यथार्थ है।

वृद्ध विमर्श को लकर लिखी गई इन अनेकानेक कहानियों के बीच स्वार्थी संतान को ही वृद्धों के कष्टों का एक प्रमुख कारण माना गया है। वर्तमान समय की उपभोक्तावादी संस्कृति और मुनष्य की स्वार्थ वृति को केंद्रीय तत्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इति जैसी कुछ कहानियां लिखी गई जिसमें वृद्ध के व्यवहार को भी सच्चाई के साथ प्रस्तुत किया गया है। जहां उसकी संतान स्वार्थ के वशीभूत होकर उसके पेंशन के रूपए इत्यादि तो लेते हैं परंतु साथ ही उसकी जिम्मेदारी भी उठाते हैं परंतु वृद्ध का व्यवहार प्रस्तुत कहानी में कुछ इस तरह का है कि वह स्वयं अपने परिवार के सदस्यों के प्रति समस्या उत्पन्न करते हैं।

वृद्ध विमर्श को नई दिशा देती एक महत्वपूर्ण कहानी है **सही दिशा की ओर** प्रस्तुत कहानी बहुत जरूरी बात कहती है कि जहां दायित्व बांटा गया है, केवल नई पीढ़ी पर ही दोषारोपण करने की अपेक्षा रिटायर होती पीढ़ी को भी समझाइश दी गई है। सब गलती पुत्र, पुत्र वधू की ही नहीं है क्योंकि आज की अर्थ प्रधान जिंदगी में वे दोनों भी कार्य करने के लिए मजबूर हैं। घर और नौकरी की व्यवस्तताओं के बीच यदि बुजुर्ग माता—पिता उनकी जिम्मेदारी बनने के साथ—साथ उनके कुछ कर्तव्यों के भागीदार भी बने तो जीवन की यह यात्रा सुख पूर्वक पार की जा सकती है। साथ ही स्वयं अपने परिवार में अपनी उपयोगिता भी कायम रखी जा सकती हैं।

प्रस्तुत कहानी का नाटक यही सोच कर शायद कहता है।

'किंतु आज उन्हें महसूस हो रहा था कि नहीं नई पीढ़ी शायद पूरी तरह दोषी नहीं, कुछ दोष तो हमारी पीढ़ी का भी है जो एक तो समय के साथ तालमेल नहीं बिठा पा रही है दूसरा वर्तमान पीढ़ी को ठीक से समझने में भी असमर्थ हो रही है हमारी पीढ़ी को अधिकार के साथ—साथ अपने कर्तव्यों को भी पहचानना चाहिए।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी साहित्य में इस नवीन विमर्श को लेकर अनेकानेक कहानियां लिखी गई और लिखी जा रही हैं जिनमें से कुछ कहानियों की चर्चा प्रस्तुत आलेख में की गई। इसके अतिरिक्त भी अनेक कहानियां है जो वृद्ध विमर्श को लेकर लिखी गई है इनमें से कुछ है— प्रेत कामना (मनीषा कुलश्रेष्ठ) एक बूढ़े की मौत (शशिभूषण शर्मा) बुढ़ा मंगल (रवींद्र कालिया) बीच बहस में (निर्मल वर्मा) दादी अम्मा (कृष्णा

सोबती) सोने की चिड़िया (हरि प्रकाश राठी) कोई दूसरा नहीं (जया जादवानी) इत्यादि ।

वृद्ध विमर्श की दृष्टि से यदि बात की जाए तो आज की कहानी बिना लाग लपेट के इस महत्वपूर्ण विषय को उठाती है। इस विमर्श से जुड़े सभी मुद्दों को वह गहनता से पड़ताल करती है। सेवानिवृत अवस्था, संतानों से प्राप्त तिरस्कार, मृत्यु भय, बीमारी, यातना, बेबसी, पीढ़ियों का अंतराल, अकेलापन, अपने ही परिवार से अस्वीकृति, वैधव्य, विधुरपन इत्यादि अनेक अनेक समस्याओं को अपने भीतर समेटती हिंदी कहानी सशक्त ढंग से वृद्ध विमर्श की बात करती है। और कहीं ना कहीं समाधान की एक किरण भी हमारे समक्ष उजागर करती हैं जहां आवश्यकता है जिम्मेदारी के अहसास को बढ़ाने की तो कर्तव्य बोध को विकसित करने की आवश्यकता भी आज की कहानी मंडित करती है। उभरती हुई नई पीढ़ी और ढ़लती पीढ़ी दोनों के बीच सामंजस्य व संवाद की आवश्यकता को अभिव्यक्त करती कहानियां यथार्थ की अभिव्यक्त के माध्यम से आत्मा को उद्वेलित करती हैं। भीतर की परतें खोलती है। परंतु कहीं न कहीं एक टीस की सृष्टि भी करती हैं।

जैसा कि वशिष्ठ अनूप ने लिखा है

'रहा करते थे बच्चे जिस तरह मां बाप के घर में उसी अधिकार से मां उनके घर क्यों नहीं रह पाती।'

डॉ. अनिता गोयल
सहायक आचार्य (हिन्दी) राजकीय डूंगर महाविद्यालय,
बीकानेर मोबाइल 9461244503

संदर्भः—

संस्कृति की उत्तर कथा	शंभू नाथ
बूढ़ी काकी	प्रेमचंद
चीफ की दावत	भीष्म साहनी
बेंच पर बुड्ढ़ा	मृदुला गर्ग
वृद्धमन की कहानियां	डॉ. शीतांशु भारद्वाज
वैराग्य	गीतांजलि श्री
यहां हाथी रहते थे	गीतंजलि श्री

मोहनदास नैमिशराय की कहानियाँ : दलित चेतना के संदर्भ में

– विप्रा जनार्दन राऊल

हिन्दी दलित कहानी लेखन उत्तर आधुनिक युग की देन है। दलित कहानियों पर डॉ. आंबेडकर की विचारधारा का प्रभाव परिलक्षित होता है। दलित कहानीकारों ने जिस सच को कहानियों का विषय बनाया वह उनका भोगा हुआ सच है। उनकी स्वानुभूति की अभिव्यक्ति है। उन्होंने समाज के दबे—कुचले शोषित पीड़ित दलितों की दबाई हुई आवाज को अपनी कहानियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

हिन्दी दलित कहानीकारों में मोहनदास नैमिशराय का स्थान महत्त्वपूर्ण है। उनकी दलित कहानियाँ दलित जीवन के विविध पहलुओं से परिचित कराते हुए दलित चेतना जागृत करती है। उनकी 'आवाजें', 'हमारा जवाब' कहानी संग्रहों द्वारा दलितों में उभरते आक्रोश, विद्रोह एवं संघर्ष की तीव्र चेतना को प्रकट किया है। मोहनदास नैमिशराय ने लिखा है—"जहाँ तक मेरी कहानियों की बात है, उनके पीछे कोई बौद्धिक विकास या काल्पनिक सुख नहीं है, बल्कि इस कहानी में दलित होने का एहसास है।"[1] प्रस्तुत लेख में उनकी कहानियों का दलित चेतना के संदर्भ में विवेचन किया गया है।

दलित कहानियों का उद्देश्य केवल समाज में दलितों पर होनेवाले अत्याचार को ही चित्रित करना नहीं, बल्कि ये कहानियाँ अत्याचार का विरोध कर चेतना जागृत करती हैं। परिवर्तन की मांग करती हैं। मोहनदास नैमिशराय की कहानियों में शोषकों के प्रति विद्रोह करने की प्रेरणा है, सामाजिक न्याय की माँग है एवं मानवीय अधिकारों के प्रति जागृति है। डॉ. रमणिका गुप्ता लिखती है—"ये बौखलाए हुए आदमी की कहानियां नहीं ये उस सताए हुए समाज की कहानियां हैं जो

मनुष्यता का दावा करना सीख गया है और बराबरी का हक माँग रहा है। वे लोग अब दूसरी दुनिया के यथार्थ को अपनी नियति मानने को तैयार नहीं हैं।''[2] मनुष्य के रूप में जीने का अधिकार ये कहानियाँ माँगती हैं।

शोषण और दमन के विरुद्ध चेतना का आक्रमक रूप मोहनदास नैमिशराय ने 'कर्ज' कहानी में प्रस्तुत किया है। कर्ज देकर अशिक्षित गरीब दलितों को ठगनेवाले महाजन जैसे शोषकों के विरुद्ध विद्रोह की आवश्यकता है तभी दलितों की स्थिति में परिवर्तन संभव है। कहानी का नायक अशोक प्रेरणा देता है कि अत्याचारी के अत्याचार को मत सहो उसका प्रतीकार करो। अन्यायी महाजन का अंत कर वह न सिर्फ अपने पिता, माँ–बहन की मृत्यु का बदला लेता है, बल्कि सारे पीड़ित दलित समाज के प्रति अपना कर्ज उतार देता है। धार्मिक ढकोसलों पर विश्वास रखकर कर्ज में न डूबने का आवाहन भी कहानी में किया गया है। कहानी में अशोक का कथन है– "तुम इन भोले–भालों को कर्म का सबक पढ़ाकर कर्ज लेने के लिए मजबूर करते हो। उन्हें तैंतीस करोड़ देवताओं के चक्कर में डालकर झूठी धार्मिकता के बहाने उनका शोषण करते हो।''[3] दलितों पढ़–लिखकर जागृत होंगे तभी उनकी स्थिति में परिवर्तन संभव है। शोषण और दमन के विरुद्ध यह एक सशक्त कहानी है।

मोहनदास नैमिशराय ने 'हमारा जवाब' कहानी में सदियों से चली आ रही पुरातन पारंपरिक मान्यताओं के विरुद्ध आवाज उठाई है। डॉ. आंबेडकर ने गोलमेज सम्मेलन में दलितों को परंपरागत व्यवसायों को छोड़कर नए व्यवसाय शुरू करने का आवाहन किया था। डॉ. आंबेडकर के दर्शाए मार्ग पर चलते हुए दलितों को परंपरागत व्यवसाय त्यागकर प्रगति की दिशा में मार्गक्रमण करते हुए इस कहानी में दर्शाया गया है। हिम्मत सिंह के मन में समाज में फैले जातिगत भेदभाव के प्रति क्रोध है। वह मंडी में मिष्ठान का खौमचा लगाता है। उसकी दलित जाति के संबंध में जानने के उपरांत सवर्णों की भेदपूर्ण नीति उसे आगे बढ़ने से रोकने का भरसक प्रयत्न करती है, लेकिन वह हिम्मत नहीं हारता। वह कहता है "मैं इसलिए मिष्ठान का खोमचा लगाना बंद कर दूं कि मैं दलित समाज से हूँ... । नहीं, नहीं मैं यह कार्य पहले की तरह ही करता रहूँगा। देखते हैं कौन रोकेगा मुझे। इसी प्रकार का जज्बा दलितों में होना आवश्यक है तभी उनका विकास संभव है।

ग्रामीण प्रदेश की दलित स्त्रियाँ धनिक जमींदारों के शोषण को सहती आई हैं। इस शोषण का पर्दाफाश 'रीत' कहानी में किया गया है। दलितों की इज्जत के साथ खिलवाड़ करनेवाले जमींदार के आगे न झुककर उसका मुकाबला करने की प्रेरणा लेखक देता है। बुलाकी की नई नवेली दुल्हन फूलो को पहली रात ही जमींदार के कारिंदे उठाकर हवेली ले जाते हैं। गाँव में यही रीत निभाई जाती थी। किसी में भी इसका विरोध करने की हिम्मत नहीं थी। चुपचाप सभी अत्याचार को सहते आ रहे थे। लेकिन बुलाकी अन्याय के विरुद्ध लड़ने की हिम्मत रखता है। जमींदार को उसके किए की सजा देने के बाद वह अपनी पत्नी से कहता है– "फूलों अब कोई जमींदार गाँव की किसी औरत की इज्जत खराब नहीं करेगा। मैंने उनका वंश सदा–सदा के लिए खत्म कर दिया है।''[5] यह कथन दलितों को शक्ति प्रदान करनेवाला है। दलितों को कहानी द्वारा यह ज्ञात करवाने का प्रयत्न किया गया है कि वे कमजोर नहीं हैं।

संघठन में शक्ति होती है। डॉ. आंबेडकर ने दलितों को संघटन का महत्त्व समझाया था। संघठित होकर अन्याय के विरुद्ध लड़ाई ही कारगर सिद्ध होगी। 'अधिकार चेतना' कहानी में शेरगढ़ी गाँव में बाबासाहेब अंबेडकर की प्रतिमा स्थापित करने के कारण सवर्ण एवं दलितों के बीच हुए संघर्ष को चित्रित किया है। सवर्ण एवं दलितों के बीच हुई मुठभेड़ ने पुलिस ने दो दलित युवकों पर गोली चलाकर उनकी हत्या कर दी। इससे बौखलाए दलित डरे नहीं बल्कि उन्होंने मिलकर पुलिस

की हत्या कर दी। दलितों में जागृत चेतना को दर्शाते हुए लेखक लिखते हैं–"शेरगढ़ी के दलित न थके और न उदास हुए थे। उनके बीच अभी भी जुझारू तेवर मौजूद थे। उत्साह का संचार एक–दूसरे के द्वारा हो रहा था। पुलिस दमन के विरोध में उनके भीतर में आक्रोश उभार रहा था।''[6] दलितों को सिर्फ एकत्रित होकर आगे कदम बढ़ाने की आवश्यकता है फिर बड़े से बड़े संकट का आसानी से मुकाबला किया जा सकता है।

'अपना गाँव' में दलित स्त्री छमिया (कबूतरी) पर हुए अत्याचार के विरुद्ध सारे दलित जंग छेड़ते हैं। ठाकुर के खेतों में काम करने से मना करने का दुस्साहस कबूतरी ने किया था। गाँव के बाहर उसे अकेला पाकर ठाकुर से कारिंदों ने उसे लाठी से पीटते हुए निर्वस्त्र कर पूरे गाँव में घूमाया। अपनी बात मनवाने के लिए स्त्री के साथ ऐसा घृणित व्यवहार कहाँ की मर्दानगी है? दलित स्त्री की इज्जत के साथ खिलवाड़ से दलित बौखला उठे। वे अपनी स्त्री पर हुए अत्याचार का बदला लेना चाहते थे। कबूतरी के ससुर हरिया ने कहा –"भईया हम कब तक कमजोर बने रहेंगे ? कब तक हम गुलामों की तरह रहेंगे ? तुम्हें मालूम नहीं डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने क्या कहा था ? तुमने उनका नाम सुना है ? एक दो बार चौदह अप्रैल को कार्यक्रम भी हुए थे। उन्होंने कहा था– गुलामों को गुलामी का एहसास करा दो, वे गुलामी की जंजीरें खुद तोड़ देंगे।''[7] ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार "यह कहानी दलित सरोकारों और जिजीविषा की एक श्रेष्ठ और सशक्त कहानी है जो दलित आंदोलन के प्रबल पक्ष को उजागर करती है।''[8]

आरक्षण के कारण दलित युवक लाभान्वित हुए हैं परंतु आरक्षण के मुद्दे पर दलित युवकों का शोषण भी होता है। 'मैं, शहर और वे' कहानी में दलितों को मिलनेवाले आरक्षण के कारण सवर्णों की नाराजगी चित्रित की है। दलित युवकों को आरक्षण के मुद्दे पर प्रताड़ना भी सहनी पड़ती है। आरक्षण के विरोधियों को आरक्षण के विद्यार्थियों द्वारा दिया गया करारा जवाब कहानी में चेतना जागृत करता है। आरक्षण के विद्यार्थी अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए बोले–''हम बतला देना चाहते हैं कि अब हम गुलाम नहीं है। हमारे भीतर भी खून है।''[9] अत्याचार के सामने सिर झुकाने से अत्याचारी की हिम्मत और बढ जाएगी। अत्याचारी का सामना करने की प्रेरणा लेखक ने कहानी द्वारा दी है।

यह सत्य है कि स्त्री शिक्षित हो गई तो सम्पूर्ण परिवार की प्रगति होगी। 'तुलसा' कहानी द्वारा नैमिशराय ने स्त्री शिक्षा का महत्व दर्शाया है साथ ही स्त्री को शिक्षा प्राप्ति के लिए कहानी के माध्यम से प्रेरणा प्रदान की है। लेखक कहानी के माध्यम से पाठकों से प्रश्न पूछते हैं–''अपने ही घर में सोलह वर्षों तक तुम एक लड़की को अशिक्षा के अंधेरे में रख सकते हो ? कहाँ गया तुम्हारा समता, न्याय और लोकतंत्र का सिद्धान्त....?''[10] अपनी बेटियों को पढ़ाकर उनके उज्ज्वल भविष्य के द्वार खोलने की चेतना कहानी के माध्यम से लेखक प्रदान करते हैं।

एक दलित के रूप में समाज में जीना चुनौतीपूर्ण है। हर कदम पर दलितों को अपमान, शोषण का सामना करना पड़ता है। 'बात सिर्फ इतनी थी' कहानी के माध्यम से एक छात्र द्वारा लेखक इस बात को सिद्ध करते हैं कि संकीर्ण मानसिकता वाले समाज में जातिभेद आज भी व्याप्त है। लेकिन लेखक ने चेतना जागृत करते हुए समझाने का प्रयत्न किया है कि हमें भागना नहीं इस समाज को बदलना है। जातिभेद से छुटकारा दिलाने के लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता को लेखक ने व्यक्त किया है।

मोहनदास नैमिशराय की कहानियों के संदर्भ में कमल सचदेव का कथन है–"दलितों की पीड़ा को व्यक्त कर देना मात्र इन कहानियों का लक्ष्य नहीं है बल्कि उनके भीतर सुलगता आक्रोश धीरे–धीरे विरोध में बदलता दिखाने के प्रति भी मोहनदास नैमिशराय सतर्क

रहे हैं।''[11] दलित चेतना को जागृत करनेवाली मोहनदास नैमिशराय की कहानियाँ क्रांतिकारी कदम उठाते हुए जागृति की राह पर चलती हैं। उनमें नए मानवतावादी मूल्यों पर आधारित बेहतर समाज निर्माण की आशा है। अन्यायरहित समताधिष्ठित समाज के नवनिर्माण की अपेक्षा व्यक्त हई है। मोहनदास नैमिशराय की कहानियाँ दलितों के मन में सुलगती आक्रोश की चिंगारी को विद्रोह में परिवर्तित करने की क्षमता रखती है।

शोध छात्रा– विप्रा जनार्दन राऊल
गोवा विश्वविद्यालय, गोवा
फोन क्र. 9922191052

संदर्भः–

1. मोहनदास नैमिशराय, आवाजें, वैभव प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, दो शब्द से
2. रमणिका गुप्ता, दलित चेतना, साहित्यिक और सामाजिक सरोकार, समीक्षा पब्लिकेशन, दिल्ली, 2004, पृ. 98
3. मोहनदास नैमिशराय, हमारा जवाब, श्रीनटराज प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2005, पृ. 18
4. वही, पृ. 51
5. वही, पृ. 123
6. मोहनदास नैमिशराय, आवाजें, श्री नटराजन प्रकाशन दिल्ली, संस्करण, 2011, पृ. 97
7. वही, पृ. 62
8. ओमप्रकाश वाल्मीकि– दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, तीसरी आवृत्ति 2009, राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ. 112
9. मोहनदास नैमिशराय, आवाजें, श्री नटराजन प्रकाशन दिल्ली, संस्करण, 2011, पृ. 142
10. मोहनदास नैमिशराय, हमारा जवाब, श्रीनटराज प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2005, पृ.71
11. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, तीसरी आवृत्ति 2009, राधाकृष्ण प्रकाशन, पृ. 113

"The Poetics of Dholi Folk Poetry Duringthe Corona"

Shankar Lal Dholi, Asst. Pro

Dholi folk literature of Rajasthan is based on the cultural tradition of *yajman* community of Rajasthan. In the opening lines of the book Primitive Cultures Sir E. B. Tylor says (1871): "Culture is that complex whole which includes knowledge, belief, art, morals, law, customs and other capabilities and habits acquired by man as a member of society". (Elias G. Carayannis, 10) Dholi folk literature consists literary creations composed by Dholi bards and poets of Rajasthan. Dholi folk literature has different genres with different subjects. It is based on the oral tradition of Dholi community of Rajasthan. The word tradition means an act which is followed through generations and has been accepted as the part of culture.Martha C. Sims and Martine Stephens Write:

What is tradition?

Both the lore we share and the process by which we share it. Something that creates and confirms identity.

Something that the group identifies as a tradition.(Martha C. Sims, Martine Stephens ,65)

People and their struggle for betterment of life, various historical incidents and happenings like wars, battles, revolutions, movements, disasters and calamities like draughts, floods etc., miracles, mysteries and rumours prevailing in the society which affect people is subject of literary creations by folklorists generally. Folk literature consists variouselements of folklore like songs, poems, tales, stories, proverbs etc. Martha C. Sims and Martine Stephens give a working definition of folklore and say:

Folklore is informally learned, unofficial knowledge about the world, ourselves, our communities, our beliefs, our cultures and our traditions, that is expressed creatively through words, music, customs, actions, behaviours and materials. It is also the interactive, dynamic process of creating, communicating, and performing as we share that knowledge with other people. (Martha C. Sims, Martine Stephens ,8)

Since the last year of the second decade of the twenty first century the world has been facing a life threatening challenge in the form of attack by novel corona. The challenges and changes which have been brought by novel corona in the society and measures taken by the governments, NGOs and saviours are presented in Dholi folk literature. The paper presents a poem titled "*Anokho Rog Hi Aayo Re*". The poem follows the metrical pattern and formula used in Dholi folk literature. Dholi Folklorists and bards play an important role in awakening the people against the challenges of these new changes. Poems and songs by different bards and poetsawakened the people and shown them a new ray of hope to meet the challenges during the period of the Revolution of 1857, the Independence Movement of 1947, draught and floods of Bihar and Bengal and Plague Epidemic. The literary creations of Dholi bards and poets have been included in the Charan literature of Rajasthan. **Dr. K. S. Gupta and Dr. J.K. Ojha write:**

"Charan literature is generally based on bravery and wars. In this category despite the literature of Charans, the literature by different castes like Rao, Dadhi, Dholi,Motisar, Sewag, Brahmin, Rajputs etc. have been included in Charan literature." (K. S. Gupta, J.K. Ojha, 113)

The poem *ANOKHO ROG HI AAYO RE* follows the literary tradition of Dholi folk literature. It has been a tradition among Dholi poets and bards that they compose poetry on contemporary subjects and recite them in front of the *yajmans* and other listeners. They are being rewarded for their literary compositions. Dholi poets and bards compose poems to describe the contemporary society and awaken people during new challenges brought by humans or nature.

ANOKHO ROG HI AAYO RE
Kavit bnau akhar jod, mata dadmat manay!
Galati ho ja garib su, sda karjyo sahay!!

Kuldevi dadmat deepe, got manglo to may!
Kripa babu dholi per karjyo, aap padharo aay!!

Sahay karjyo sakal ri, araj sunnjyo ambe!
Kossanne dholi araj kre, le le kar hath lambe!!

Anokho rog hi aayo re, anokho rog hi aayo re!
Chahu dis korono chhayo re,anokho rog hi aayo re!!
Korono udham machayo re,anokho rog hi aayo re!!!

Pratham rog chin mai chalyo, or jabbar vvniyo jog!
Korono rog kardo aayo, lakho marga log!!

Prashashan ubo pkko, doctor nurse nem!
Din rat uba dekhlo, ni hai koi tem!!

Anokho rog hi aayo re   anokho rog hi aayo re!
Chahu dis korono chhayo re,anokho rog hi aayo re!!
Korono udham machayo re,anokho rog hi aayo re!!!

Gahlot hai neta bhari, minkha ra rakhe man!
Ghar betha gariba ne, sarkar pugave ann!!

Haldi mirch lunn dana, or aato pugave aap!
Dayawan bhamashah dekho, sacha dil ra saph!!

Anokho rog hi aayo re   anokho rog hi aayo re!
Chahu dis korono chhayo re,anokho rog hi aayo re!!
Korono udham machayo re,anokho rog hi aayo re!!!

The poet begins the poem following the style and pattern of Dholi folk literature in which every literary performance, ritual or act starts with words evoking the deity or god. He begins the poem by evoking the goddess to strengthen his poetic capabilities and help him to compose a poem. He also requests the deity for any error which might remain in his creation unknowingly. In first three couplets of the poem the evocation of deity is main theme. The poet urges the deity to help the whole world to live a peaceful, happy and prosperous life. To evoke or worship the god or deity at the beginning of any literary creation and request to forgive the poet for any unknown error in his creation is the tradition of Hindu writings. The poets and bards of Dholi folk literature follow the pattern of Hindu writings. In his essay *The Sources of Poetry* Sir Aurobindo writes"*Sarswati* for us is the goddess of poetry, and her name means the stream or 'she who has flowing motion'. (G.N Devy,186)

In first triplet of the poem the poet explains the strangeness of the novel corona and unrest and fear caused by it. Later on he describes that the disease has spread in the world including different neighbouring countries like Pakistan etc. and has killed lacks of people. The scenario during Corona pandemic was much dreadful. Labourers were walking on the road for days and nights to reach their native places. Many social workers and saviours were working hard to help them. Dead bodies were floating in the holy river Ganga. People were dying in hospitals due to unavailability of oxygen. The poet gets the inspiration to compose the poem by deadeningscenario of the pandemic. A poet may get inspiration for his creation from different sources. In his essay *The Sources of Poetry* Sir Aurobindo writes" …There is also a territory and yet more common action of the inspiration. For of three mental instruments of knowledge, -the heart or emotionally realising mind, the observing and reasoning intellect with its aids, fancy and memory, and the intuitive intellect…". (G.N. Devy,187)

In next couplet the poet sings in praise of doctors, nurses and paramedical staff of the nation who work day and night to help affected people and save their lives. Various news regarding the loss of the lives of medical staff serving the covid patients is the proof of their hard duties and sacrifices. The praise by poet for doctors, nurses and paramedical staffin the poem is an expression of gratitude for them by himself and listeners of the poem.Different precautionary measures like to drink warm

water, wear mask and follow social distancing and lockdown etc. are mentioned in the poem. In next stanzas the poet praises the chief minister of Rajasthan, social workers and saviours who served the people by providing foods and other needs during the difficult time of pandemic. Contribution by different industrialists and *donors* of the nation to fight against the corona couldn't remain away from the literary eyes of the poet. He praises for them in his poem.

The poem *ANOKHO ROG HI AAYO RE* follows the formula used by Dholi bards. The repetitions of words and letters in a pattern to create the rhyme and lyrical effect is known as formula. Lord Parry defines formula as "a group of words which is regularly employed under the same metrical conditions to express a given essential idea" (Parry:80)The rhyme used in this poem is affected by *Dingal* literary style of *Rajasthani* language. The poet repeats a triplet after every two quatrains generally which gives a rhythmic pattern to the poem and its recitation becomes lyrical. The repetitions of the triplet *Anokho Rog Hi Aayo Re* throughout the poem symbolizes the poet's warning to the people about the consequences of carelessness in taking precautions against corona. The dreadful effect and sudden outburst in the numbers of corona patients expresses the worries of the poet. People who care less during the pandemic are more vulnerable to disease in comparison of the people who use precautionary measures, wear masks and follow the rules of lockdown and social distancing. The triplet expresses the dreadful contamination of the corona. The poem became popular among the *yajmans* and other listeners and developed the awareness.

Shankar Lal Dholi, Asst. Pro.
Govt. College Gogunda, Udaipur (Raj)
Mob. +91 99286 34588

Reference:

Barry, Peter. *Beginning Theory: An Introduction to Literary and Cultural Theory*. ManchesterUniversity Press, 2019.

Easthope, Antony, and Polly Dodson. *Literary into Cultural Studies*. Routledge, 1991.

Foley, John Miles. *The Theory of Oral Composition: History and Methodology*. Indiana University Press, 1988.

G. N. Devy. *Indian Literary Criticism: Theory and Interpretation*. Orient Black Swan, 2020.

Gupta, K S, and J K Ojha. *Rajasthan Ka Rajnetik Evm Sanskkritik Itihas*. first ed., Rajasthani Granthagar, Jodhpur, 1986.

Sims, Martha C., and Martine Stephens. *Living Folklore: An Introduction to the Study People and Their Traditions*. Utah State University Press, 2011.

दोहे

दोहे में रखना सदा, गति यति का तुम ध्यान।
देता जाएगा खुशी, मात्राओं का ज्ञान ॥

दोहे में है यह सदा चार चरण बलवान।
करके गणना सब सही, लय का रखना ध्यान ॥

पहले तीजे में सदा, तेरह का है वास।
दूजे चौथे में रखों, ग्यारह सारे खास ॥

रहकर सतर्क तुम सदा, बढ़ना संग विधान।
शुरु में झ र भ स है मना, रखना हरदम ध्यान ॥

मंगल में करना भले, दग्धाक्षर उपयोग।
बाकी के आरम्भ में सदा व्यर्थ है योग ॥

चार चरण की यह विधा, चाहे सुन्दर तौल।
आखर-आखर में सदा भरो भाव अनमोल ॥

चारों चरणों में दिजो लघु गुरु का नित ध्यान।
मात्रा ग्यारहवीं सदा सबमे लघु है आन ॥

संग छन्द के नित रहे, सब शब्दों का भान।
होगी सार्थक साधना, दूर रहे अभिमान ॥

सदा मिलेगी सफलता, होगा उंचा नाम।
बतलाते नित सार सब, चलना तुम अविराम ॥

पढ़कर तुम नियमावली, बढ़ते जाना रोज़।
होगी पूरी साधना, करते रहना खोज ॥

डॉ. जयसिंह अलवरी
सम्पादक- साहित्य सरोवर
न्यू दिल्ली हाउस, नियर बस स्टैण्ड
सिरुगुप्पा-583121 जिला बल्लारी(कर्नाटक)
मो. 9886536450

''हमें दो तरह की शिक्षा चाहिए- एक वह जो हमें रोजी-रोटी कमाना सिखाएं, दूसरी वह जो हमें जीने का ढंग सिखाए। उत्तमता भाग्य से हासिल नहीं होती, यह कड़ी मेहनत और अभ्यास का परिणाम होती है। कड़ी मेहनत और अभ्यास से मनुष्य हर काम को बेहतर ढंग से कर सकता है। किसी सार्थक काम के लिये कड़ी मेहनत करने का अवसर प्रदान कर जिंदगी हमें सबसे बड़ा पुरस्कार देती है।''

हमे दुनिया के सबसे कीमती रत्न से भी अधिक सुरक्षा अपने चरित्र की करनी चाहिए। विजेता बनने के लिये चरित्र आवश्यक है। जार्ज वाशिंगटन का कहना था- मुझे उम्मीद है कि मेरे पास उस चीज को कायम रखने लायक दृढ़ता और सदगुण हमेशा बने रहेंगे। जिसे मैं सभी उपाधियों से अधिक कीमती मानता हूँ और वह चीज है एक इमानदार आदमी का चरित्र।

पंजीयन संख्या
RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में ,

पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक पिंकी सत्यप्रेमी ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स, 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734-4000030 से मुदित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734-2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार